MAHATMA GANDHI VIDYAMANDIR'S

ARTS, SCIENCE AND COMMERCE COLLEGE, HARSUL

TAL- TRYAMBAKESHWAR, DIST- NASHIK

[Affiliated to Savitribai Phule Pune University of Pune]

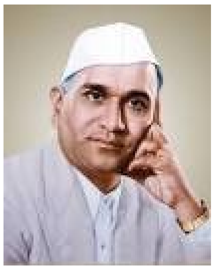

Internal Quality Assurance Cell (IQAC)

Criterion 3: Research, Innovations and Extension

3.3 Research Publication and Awards

3.3.2 Number of books and chapters in edited volumes/books published and papers published in national/ international conference proceedings per teacher during last five year

3.3.2 Number of books and chapters in edited volumes/books published and papers published in national/ international conference proceedings per teacher during last five year										
SR. No.	**Name of the teacher**	**Title of the book/chapters published**	**Title of the paper**	**Title of the proceedings of the conference**	**Name of the conference**	**National / International**	**Year of publication**	**ISBN number of the proceeding**	**Affiliating Institute at the time of publication**	**Name of the publisher**
1	Mr. Ajay Eknath Ahir	Maharashtracha Samajik Itihas jat, varg ani Lingbhav pariprekshya (Jounal)				International	2018-19	ISSN 2348-7143	Arts, Sci. & Com.Collge, Harsul	Swatidhan International Publication
2	Dr. Motiram Deshmukh	Kokana Adivasinche Loksahitya - Book					09-Aug-20	ISBN 978-81-943594		Medha Publishing House, Amravati
3	Mr. Shrikrishna Jadhav	Re-Engineering of academic Library Sense (Chapter)		Research Methodology in Library Science		National	2021	978-81-951586	Arts, Sci. & Com.Collge, Harsul	Aruna Prakashan Latur
4	Dr. Poonam Borse	Madhyam Lekhan mein rojgar ke avsar (Journal)		Madhyam Lekhan mein rojgar ke avsar (Journal)		International	2021	E ISSN2348-7143	Arts, Sci. & Com.Collge, Harsul	Swatidhan International Publication
5	Dr. Poonam Borse	Impact of Globalisation on Language and Literature	Vaishvikaran aur Jansanchar Madhyam			National	2022	978-93-94403-00-0	Arts, Sci. & Com.Collge, Harsul	Prashant Publication
6	Mr. T Z Savale	Phule ,Shau,Ambedkar Vicharanchi Prasangikta	Mahatma Jyotirao Phule ani Tyanche Samajik Karya			National	2022	978-93-91712-88-4	M.S.G. College, Malegaon Camp	Atharva Publications

7	Dr. Poonam Borse	Prativedan Lekhan ke Prakar evam Upyogita		Madhyam Lekhan mein rojgar ke avsar		International	2021	E ISSN2348-7143	Arts, Sci. & Com.Collge, Harsul	Swatidhan International Publication
8	Dr. Poonam Borse	Pratham Dashak ke Hindi Sahitya men Stri Evam dalit Vimarsh	Dalit Sahitya Avdharana, Swaroop Evam Vikas			National	2017	978-93-84805-11-3	Arts, Sci. & Com.Collge, Nampur	Chintan Prakashan Kanpur
9	Mr. D.K. Mandavdhare	Multidisciplinary Studies Prospects & Problems in Modern Era	Customer Perception Towards Role of Banking Services in Current Scenario					978-920-5-20223-5	Arts, Sci. & Com.Collge, Harsul	Princeton Press
10	Dr. Poonam Borse	Worldwide International Interdisciplinary Research Jounal	Kisan Vimarsh samsya evam samadhan	Hindi Sahity Me Kisan Vimarsh		International	22-Mar-22	ISSN - 2454-7905	M.S.G. College, Malegaon Camp	Anupam Printer, Hyderabad
11	Dr. Rajani Patil	Gandhian Thoughts - Book	Education Philosophy of Mahatma Gandhi - Chapter				2nd Oct. 2022	978-93-91305-67-3		Adhar Publication

ARTS, SCIENCE & COMMERCE COLLEGE Harsul TAL. TRYAMBKSHWAR, NASHIK.

(Dr. Motiram. R. Deshmukh)
PRINCIPAL
M. G. Vidyamandir's
Art's, Science & Commerce College
Harsul, Tal.Tryambakeshwar Dist. Nashik

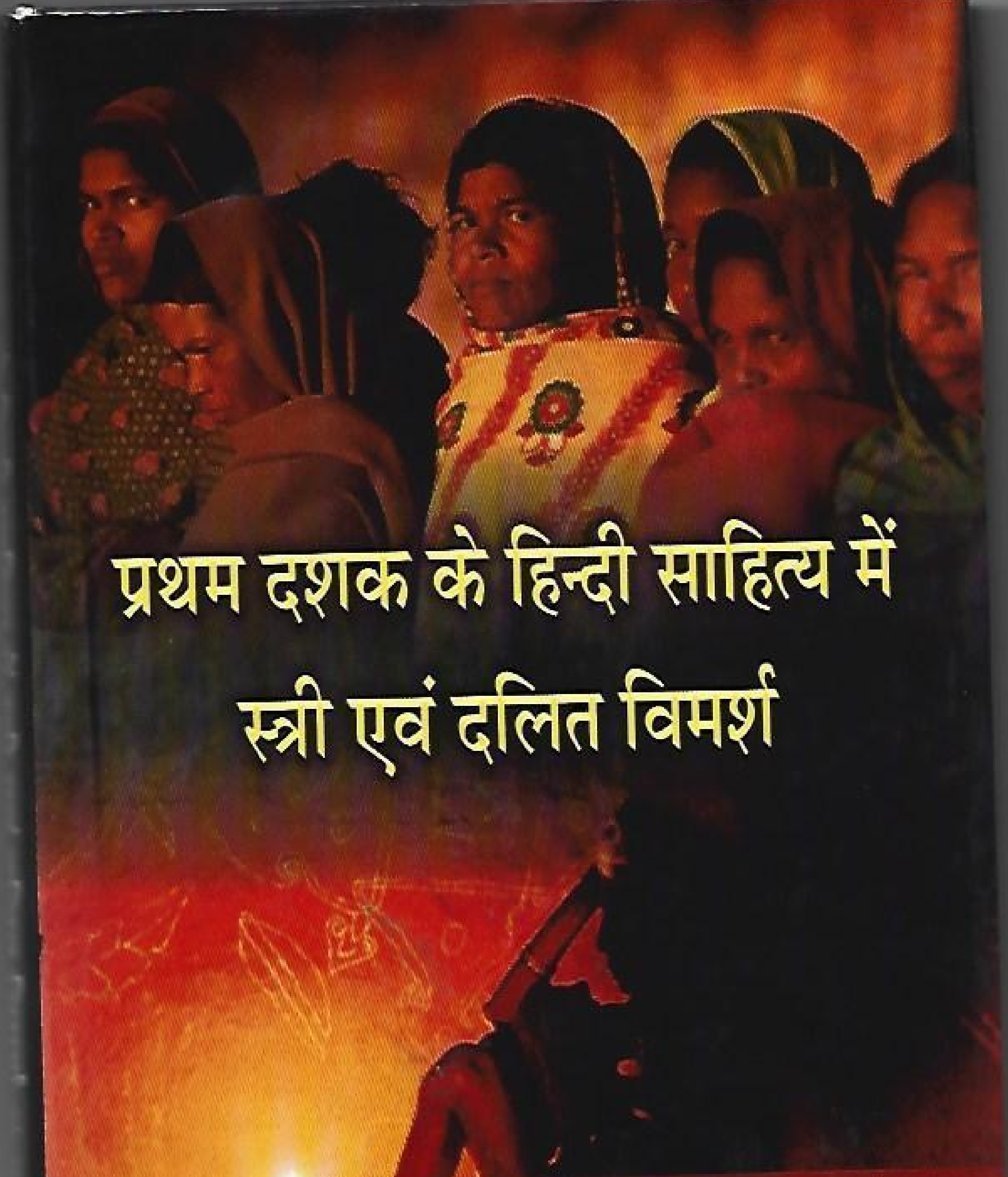
प्रथम दशक के हिन्दी साहित्य में
स्त्री एवं दलित विमर्श
सं० प्रा० रवीन्द्र ठाकरे

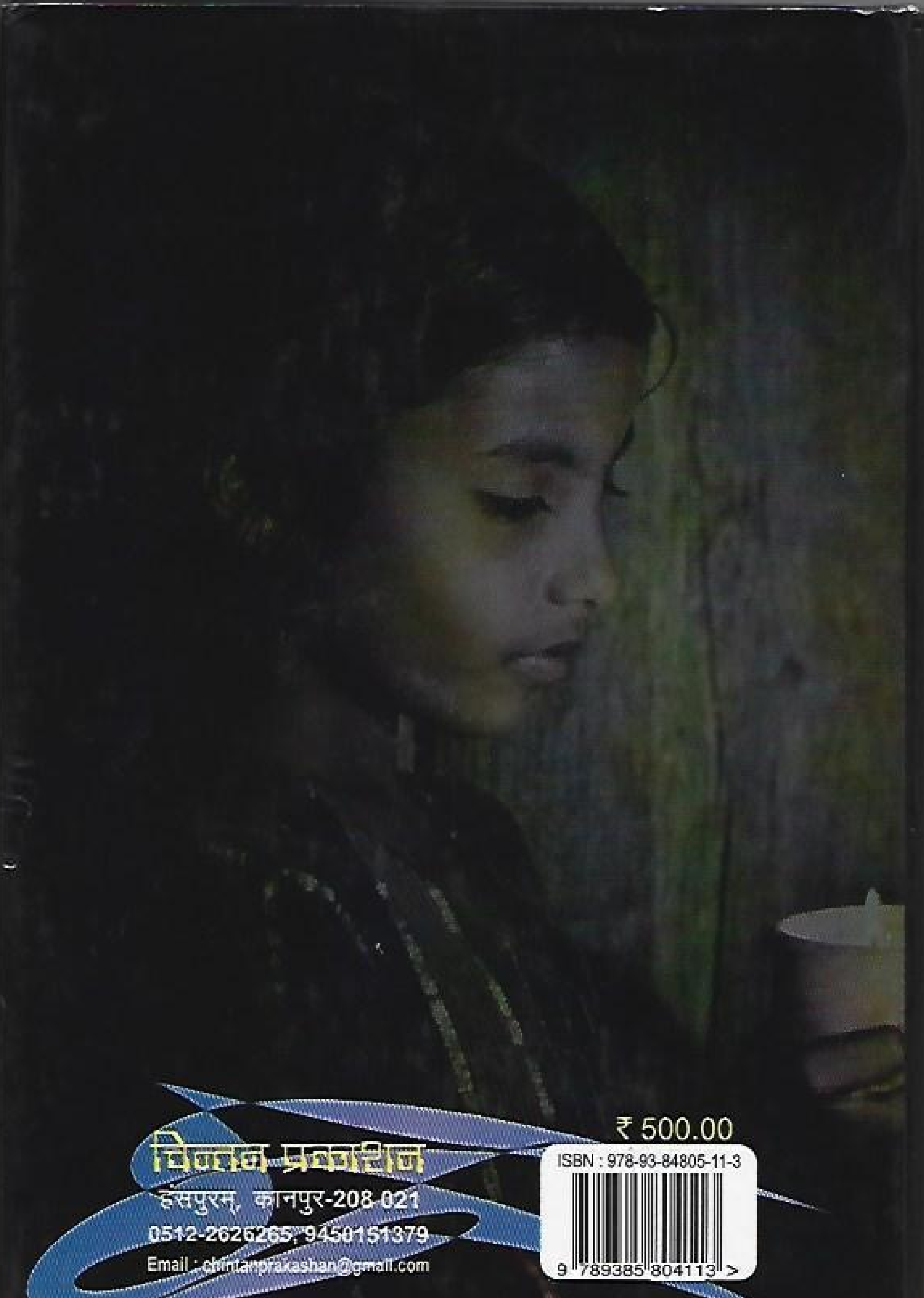

₹ 500.00

चिन्तन प्रकाशन
हंसपुरम्, कानपुर-208 021
0512-2626265, 9450151379
Email : chintanprakashan@gmail.com

ISBN : 978-93-84805-11-3
9 789385 804113 >

अनुक्रमणिका

1. स्त्री विमर्श : संकल्पना और इतिहास — 17 - 21
   प्रा॰ पंजाबी ममता नानकचंद
2. स्त्री विमर्श : संकल्पना एवं इतिहास — 22 - 26
   प्रा॰ शेवाळे राजाराम जी
3. 21वीं सदी के प्रथम दशक की कहानियों में स्त्री विमर्श — 27 - 31
   प्रा॰ सौ॰ मिनल प्रमोद बर्वे
4. नारी विमर्श और 'हरी बिन्दी' — 32 - 36
   डॉ॰ अनिता नेरे (भामरे)
5. 21वीं सदी के प्रथम दशक के साहित्य में स्त्री विमर्श — 37 - 43
   प्रा॰ वनिता त्र्यंबक पवारं
6. कृष्णा अग्निहोत्री कृत 'यह क्या जगह है दोस्तों' कहानी में स्त्री विमर्श — 44 - 48
   प्रा॰ श्रीमती यू॰ पी॰ शिरोडे
7. सीता : स्त्री विमर्श की एक कड़ी — 49 - 51
   डॉ॰ आनंद खरात
8. 21वीं सदी के प्रथम दशक के हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श — 52 - 58
   डॉ॰ सैय्यद मंजूर
9. स्त्री विमर्श और सामाजिक यथार्थ — 59 - 60
   डॉ॰ सचिन कदम
10. 21वीं सदी के प्रथम दशक के हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श — 61 - 63
   प्रा॰ बच्छाव कैलाश काशीनाथ

11. 21वीं सदी के प्रथम दशक के हिन्दी कथा साहित्य में दलित विमर्श 64 - 66
प्रा॰ जयमाला चंद्रात्रे

12. नारी जीवन की त्रासदी का मौन प्रतिवाद- 'बाबल तेरा देस में' 67 - 73
प्रा॰ गणेश दयाराम शेकोकार

13. 'लम्हा-लम्हा जिन्दगी' तथा 'काहे री नलिनी' उपन्यासों में स्त्री विमर्श 74 - 78
डॉ॰ सूर्यवंशी वाल्मीक दशरथ

14. शेष कादम्बरी में नारी विमर्श 79 - 81
डॉ॰ शशी साळुंखे

15. महिला लेखिकाओं की रचना में स्त्री भाषा 82 - 88
डॉ॰ सुरेश माहेश्वरी

16. विज़न : स्त्री विमर्श का दस्तावेज 89 - 92
प्रा॰ संतोष पगार

17. 21वीं सदी के प्रथम दशक की हिन्दी आत्म कथाओं में नारी विमर्श (मैत्रेयी पुष्पा की आत्म कथाओं के संदर्भ में) 93 - 96
प्रा॰ रत्नमाला देशपांडे

18. सूर्यबाला के कहानी साहित्य में स्त्री विमर्श ('पाँच लंबी कहानियाँ' के विशेष संदर्भ में) 97 - 103
कु॰ खळेकर एस॰ एस॰

19. दलित साहित्य : अवधारणा, स्वरूप एवं विकास 104 - 113
डॉ॰ पूनम बोरसे

20. 'बचपन मेरे कन्धों पर' में दलित विमर्श 114 - 121
डॉ॰ योगिता हिरे

21. हिन्दी की आत्म कथाओं में अभिव्यक्त दलित जीवन की अभिव्यक्ति 122 - 128
डॉ॰ मुकेशराजे गायकवाड़ 'मुकेश'

22. 'घुसपैठिये' : एक विवेचन 129 - 132
डॉ॰ विठ्ठलसिंह ढ़ाकरे

23. दलित विमर्श : मुर्दहिया के परिप्रेक्ष्य में 133 - 140
श्रीमती पुष्पा विश्नोई

24. 21वीं शदी के प्रथम दशक की हिन्दी कहानियों में दलित विमर्श 141 - 149
डॉ॰ बालाजी श्रीपती भुरे

25. मोहनदास नैमिशराय के उपन्यास 'वीरांगना झलकारी बाई' में दलित विमर्श 150 - 154
डॉ॰ जे॰ एस॰ मोरे

26. 21वीं सदी के पहले दशक के कहानी साहित्य में दलित विमर्श 155 - 158
प्रा॰ गव्हाणे बाबा साहेब

27. दलित पीढ़ी की संघर्ष गाथा ('छप्पर' तथा 'जस तस भई सबेर' के विशेष संदर्भ में) 159 - 164
डॉ॰ जालिंदर इंगले

28. दलित मुक्ति की दास्तान - 'मुक्ति पर्व' 165 - 169
प्रा॰ रवीन्द्र ठाकरे

29. 21वीं सदी के प्रथम दशक के हिन्दी काव्य में दलित स्त्री और विमर्श 170 - 173
प्रा॰ सोहनलाल

30. दलित साहित्य : बदलते जीवन संदर्भों की गाथा (दलित कविता के विशेष संदर्भ में) 174 - 181
डॉ॰ पंढरीनाथ शिवदास पाटील, प्रा॰ अंजीर नथ्थू भील

31. 21वीं सदी के प्रथम दशक के नाटक साहित्य में दलित विमर्श (नंगा सत्य' के विशेष संदर्भ में) 182 - 187
प्रा॰ आर॰ डी॰ कानडे

32. हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श 188 - 191
प्रा॰ अनीता कुंभार्डे (सोमवंशी)

19

दलित साहित्य : अवधारणा, स्वरूप एवं विकास

'दलित' शब्द का अर्थ

दलित साहित्य की अवधारणा वास्तव में 'दलित' से जुड़ी हुई है। अतः दलित साहित्य का अर्थ जानने से पूर्व 'दलित' शब्द से क्या तात्पर्य है ? यह देखना उचित है। 'दलित' शब्द की संकुचित व्याख्या से लेकर व्यापक अर्थ में अनेक व्याख्याएँ हुई हैं। अर्थात् 'दलित' शब्द के अर्थ को लेकर विद्वानों में मतभिन्नता है। हिन्दी शब्दकोशों में 'दलित' शब्द के भिन्न-भिन्न अर्थ हैं। डॉ. रामचंद्र वर्मा ने 'हिन्दी शब्दकोश' में 'दलित' का अर्थ दिया है- "मसला हुआ, मर्दित, दबाया, रौंदा या कुचला हुआ, विनिष्ट किया हुआ है।" इसी प्रकार 'ज्ञान शब्दकोश' में 'दलित' का अर्थ रौंदा, कुचला, दबाया हुआ, पदाक्रांत के साथ हिन्दुओं में वे 'शूद्र' जिन्हें अन्य जातियों के समान अधिकार प्राप्त नहीं हैं।

'दलित' शब्द की संकुचित व्याख्या जाति-विशेष से संबंध रखती है। दलित शब्द वर्तमान में प्रायः चाण्डाल, मेहतर, हरिजन, गिरिजन, आदिवासी और अछूत जातियों के लिए रूढ़ हो चुका है। महात्मा गाँधी ने अछूतों के लिए 'हरिजन' शब्द सुझाया था, लेकिन दलितों ने हरिजन शब्द स्वीकार नहीं किया। दलित लेखकों ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का 'बहिष्कृत', अस्पृश्य', 'अनुसूचित जाति', 'अनुसूचित जनजाति' और 'दलित' शब्द स्वीकार किया, क्योंकि यही उनकी स्थिति का बोधक है। ब्रिटिश सरकार ने 'डिप्रेस्ड क्लासेज' शब्द का प्रयोग किया है, जिसका अर्थ है- 'पद-दलित' अर्थात् जिन जातियों को भारतीय समाज के हिन्दू धर्म में कुछ अन्य जातियों द्वारा 'अस्पृश्य' माना जाता है और ये जातियाँ स्वयं को उच्च जाति के पद से विभूषित करती हैं।

लेकिन 'दलित' जातिगत परिभाषा से बढ़कर इसकी एक व्यापक परिभाषा भी है। प्रो. चमनलाल के शब्दों में- "समाज के वे हिस्से, जिनमें उपरोक्त जातियाँ तो शामिल हैं ही, अन्य उत्पीड़ित हिस्से जैसे आदिवासी, विमुक्त जातियाँ, गरीब किसान, मजदूर आदि शामिल हैं, को भी 'दलित' शब्द की परिभाषा में शामिल किया गया है।" मराठी दलित लेखक नामदेव ढसाल ने भी लिखा है- "दलित यानी कि अनुसूचित जाति, उपजाति, बौद्ध, श्रमिक, मजदूर, भूमिहीन, खेत मजदूर,

यायावर, आदिवासी हैं।" डॉ० सोहन पाल सुमनाक्षर का मत भी ऐसा ही है- "'दलित' वह है, जिसका दलन किया गया हो, शोषण किया गया हो, उत्पीड़न किया गया हो। उपेक्षित, अपमानित, प्रताड़ित, बाधित और पीड़ित व्यक्ति भी 'दलित' श्रेणी में आते हैं। इस तरह 'दलित' शब्द की परिभाषा के अंतर्गत जहाँ सदियों से सामाजिक बंधनों में बाधित नारी एवं बच्चे भी शामिल हैं। भूमिहीन, अछूत, बंधुआ, दास, गुलाम, दीन और पराश्रित, निराश्रित भी दलित हैं।" डॉ. माताप्रसाद ने अपनी पुस्तक 'हिन्दी-काव्य में दलित काव्य-धारा' में 'दलित' शब्द के अनेक प्रयोगात्मक अर्थों की चर्चा की है, जिनमें- चाण्डाल, अस्पृश्य, अछूत आदि शामिल हैं। 'उपेक्षित' अपमानित 'उत्पीड़ित', 'प्रताड़ित' भी इसी कोटि में आने वाले शब्द हैं।" इस प्रकार दलित शब्द आक्रोश, चीख, वेदना, पीड़ा, चुभन और छटपटाहट का प्रतीक है। यह उन लोगों की ओर संकेत करता है, जो अमानुषिक सामाजिक व्यवस्था में बंधे हुए अन्यायों की प्रताड़ना सहते, चीखते-चिल्लाते रहे, हर क्षण कदम-कदम पर अत्याचार, अपमान, तिरस्कार सहते हुए सब्र का घूँट पीते रहे। इस तरह 'दलित' शब्द जब साहित्य के साथ मिल जाता है तो साहित्य को विशिष्टता प्रदान करता है। ऐसे साहित्य को एक पृथक धारा, प्रवृत्ति या नई पहचान प्रदान करता है।

दलित-साहित्य' की अवधारणा

दलित साहित्य की अवधारणा वास्तव में दलित की अवधारणा से ही जुड़ी हुई है। दलित साहित्य डॉ. अम्बेडकर की विचारधारा को अपना मूल स्रोत मानता है। डॉ. अम्बेडकर जी की विचारधारा का मूल केंद्र बिन्दु मनुष्य था, जिसकी सीमाओं के दायरे में संपूर्ण मानवता समा जाती है। डॉ. शरणकुमार लिंबाले के अनुसार- "दलित साहित्य अपना केंद्र बिन्दु मनुष्य को मानता है। बाबासाहब के विचारों से दलितों को अपनी गुलामी का अहसास हुआ, उनकी वेदना को वाणी मिली, क्योंकि उस मूल समाज को बाबासाहब के रूप में अपना नायक मिला। दलितों की वह वेदना दलित साहित्य की जन्मदात्री है। दलित साहित्य की वेदना 'मैं' की वेदना नहीं, वह बहिष्कृत समाज की वेदना है।" जिस प्रकार दलित शब्द की संकुचित और व्यापक परिभाषा मिलती है, वैसे ही दलित साहित्य की अवधारणा में भी ये दोनों पक्ष समाहित हैं।

दलित चिंतकों का एक वर्ग 'दलित साहित्य' को निम्न जाति से जुड़ा अर्थात् सामाजिक स्तर पर उत्पीड़ित, विशेषतः 'अस्पृश्य' मानी जाने वाली जातियों द्वारा रचे गए साहित्य को 'दलित साहित्य' के दायरे में रखता है। यही दलित चिंतक यह भी मानते हैं कि 'दलित साहित्य' का सृजन केवल सामाजिक रूप से उत्पीड़ित एवं 'अस्पृश्य' समझी जाने वाली जाति के व्यक्तियों द्वारा ही संभव है। अन्य जातियों द्वारा रचा हुआ 'दलित साहित्य' सहानुभूति का साहित्य हो सकता है, स्वानुभूति का नहीं, इसलिए सहानुभूति के साहित्य को दलित साहित्य के

दायरे में शामिल नहीं किया जा सकता। दलित साहित्य निर्विवाद रूप में दलितों द्वारा रचा जा रहा साहित्य ही है। इन दलित लेखकों की मान्यता है- "दलितों द्वारा, दलितों के लिए लिखा गया साहित्य ही दलित साहित्य है।" यहाँ कतिपय दलित लेखकों की मान्यताओं को उद्धृत किया जाता है, जिससे दलित साहित्य की संकल्पना स्पष्ट हो सके। मराठी के लेखक प्रो. केशव मेश्राम लिखते हैं- "हजारों साल जिन पर अन्याय हुआ ऐसे अस्पृश्यों को दलित कहा जाना चाहिए, और उस वर्ग के लेखकों के द्वारा निर्माण किए हुए साहित्य को दलित साहित्य कहा जाना चाहिए।" डॉ. सोहन पाल सुमनाक्षर भी दलित साहित्य पर टिप्पणी करते हुए लिखते हैं- "दलित साहित्य दलितोत्थान का साहित्य है। यह वह साहित्य है जो दलितों, पीड़ितों, शोषितों, उपेक्षितों और असहाय वर्ग को उत्थान और नव विकास के लिए प्रेरित करता है, जो ऐसे व्यक्तियों को उनके गौरवमय इतिहास से परिचित कराते हुए उनको मानवीयता की पहचान कराता है। यह वह साहित्य है जो धरती से जुड़े हुए उन लोगों की, उनकी समस्या और दुर्दशा से अवगत कराते हुए उनके निराकरण और समाधान के उपाय बताता है। 'दलित साहित्य' एक ऐसा साहित्य है जो सभी तरह की वर्ण-व्यवस्था, जात-पाँत, ऊँच-नीच, भेद-भाव के दायरे से ऊपर है और जिसे धर्म, भाषा और प्रदेश की सीमाओं में नहीं बाँधा जा सकता।" ओमप्रकाश वाल्मीकि का भी मंतव्य है- "दलित साहित्य आज के समाज की यथार्थवादी सोच है जो सामाजिक यथार्थ की समूची पीड़ा को वहन करने की क्षमता रखता है। दलित साहित्यकारों का उद्देश्य मात्र दलितों पर हुए अत्याचारों, अन्याय, शोषण का विवरण प्रस्तुत करना ही नहीं है, बल्कि सवर्ण हिन्दुओं को आत्मशोधन के लिए मजबूर करना भी है। यही दलित साहित्य की प्रतिबद्धता है।"

दलित पक्ष के विपरीत गैर-दलित साहित्यकार भी अपनी-अपनी सोच से दलित साहित्य को परिभाषित करने की कोशिश कर रहे हैं। दलित साहित्य को व्यापक दायरे में रखकर देखने वाले दलित चिंतक जातिगत सामाजिक उत्पीड़न के साथ अन्य प्रकार के सामाजिक उत्पीड़न, आर्थिक, लैंगिक आदि के साहित्य-सृजन को भी 'दलित साहित्य' के दायरे में शामिल करते हैं। इसके साथ ये दलित चिंतक दलित जीवन के चित्रण के लिए 'दलित दृष्टि' या 'दलित विश्व-दृष्टि' को दलित साहित्य सृजन के लिए अनिवार्य मानते हैं। ये चिंतक दलित साहित्य को महान मानवतावादी साहित्य के अंग के रूप में देखते हैं।

दलित साहित्य और संस्कृति पर अपना अभिप्राय व्यक्त करते हुए कंवल भारती लिखते हैं- "दलित साहित्य की संस्कृति में जहाँ मानव की प्रतिष्ठा के लिए संघर्ष है, दासता के विरुद्ध क्रांति का गान है, अन्याय और शोषण के खिलाफ प्रतिरोध का स्वर है, समता है, करुणा है, संवेदना है, अहिंसा है, वहीं वह विश्व-बंधुत्व की समर्थक, परिधियों से मुक्ति चेतना का सर्जक है।" मार्क्सवादी

समीक्षक डॉ. चमनलाल ने भी कहा है- "'दलित साहित्य' वह साहित्य है, जो दलितों के जीवन, उनके सुख-दुःख, उनकी सामाजिक, राजनीतिक स्थितियों, उनकी संस्कृति, उनकी आस्थाओं-अनास्थाओं उनके शोषण, उत्पीड़न तथा इस उत्पीड़न-शोषण के दलितों द्वारा प्रतिरोध की परिस्थितियों को व्यापकता तथा गहराई के साथ कलात्मकता से प्रस्तुत करता है।" दलित साहित्य की संकल्पना को विशद करते हुए डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी भी लिखते हैं- "दलित साहित्य आंदोलन मात्र दलित मुक्ति का ही साधन नहीं है, अपितु यह साहित्यिक आंदोलन में स्वाभिमान, सम्मान को विकसित करने का एक क्रांतिकारी कदम है अर्थात् दलित साहित्य अस्तित्त्वदर्शी साहित्य है।" रजत रानी मीनू का मानना है- "दलित साहित्य के पक्ष में यह कहना गलत नहीं होगा कि अनुभूति की प्रामाणिकता दलित साहित्य में अपेक्षाकृत अधिक है, क्योंकि दलित विषयक रचना संवेदना और स्वानुभूति का प्रसार है। दलित साहित्य के निषेध का स्वर अभी भी सुनाई पड़ता है। जनवादी साहित्य, प्रगतिवादी साहित्य, संत साहित्य, स्त्री-साहित्य, बाल-साहित्य इत्यादि वर्गीकरण मतलब इतने प्रकार के भेद चल रहे हैं, तो दलित साहित्य को पुरानी कसौटियों का बंदी नहीं किया जा सकता।"

इस प्रकार विद्वानों के उपर्युक्त मंतव्यों से विदित होता है कि, दलित साहित्य का मूल स्वर लोकतांत्रिक चेतना को प्रकट करना है अर्थात् दलित साहित्य का उद्देश्य खासकर दलितों के जीवन में भारत की अन्य जातियों के समान अधिकार चेतना जगाना है, ताकि वे विकास के अवसरों, साधनों और सामाजिक न्याय आदि से वंचित न रहें। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि, दलित साहित्य धरती से जुड़े लोगों का साहित्य है। यह दलित, शोषित, पीड़ित, उपेक्षित लोगों के जीवन का दस्तावेज है। दलित साहित्य सदियों से सोए हुओं को जगाता है, दलितों में क्रांति फूँकता है, स्वाभिमान जगाता है और सामाजिक समता और स्वतंत्रता के लए उनमें चेतना जगाता है। इसके साथ समाज के तथाकथित उच्च वर्ग के शोषण से मानव को मुक्ति का मार्ग सुझाता है और उन्हें अपने अधिकारों के लिए प्रेरित भी करता है।

दलित साहित्य का विकास

दलित साहित्य में हिन्दुओं की वर्ण-व्यवस्था से उत्पन्न सामाजिक विषमता, भेद-भाव, अपमान जनक व्यवहार, उत्पीड़न, और शोषण के विरुद्ध प्रतिकार की रोषपूर्ण अभिव्यक्ति है, जो रंग, वर्ण, नस्ल, जाति, धर्म और लिंग में असमानता के विरुद्ध संघर्ष करने की प्रेरणा देता है। इसी प्रकार दलित साहित्य सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और शैक्षणिक क्षेत्रों में समता का समर्थक है और स्वतंत्रता, समता, न्याय, बंधुता, लोकतंत्र और सर्व धर्म सद्भाव का पोषक भी है।

भारतीय साहित्य में दलित साहित्य सिर्फ आधुनिक काल में ही नहीं,

भारतीय साहित्य के आरम्भ से ही जीवन के इस पक्ष की अभिव्यक्ति होती रही है। संस्कृत, पालि और प्राकृत साहित्य में भी दलित-जीवन केंद्रित रचनाएँ विद्यमान हैं और आधुनिक भारतीय भाषाओं के आदि, मध्य और आधुनिक काल में भी इन रचनाओं की प्रचुरता है। आधुनिक भारतीय दलित साहित्य प्रमुखतः गौतम बुद्ध, महात्मा ज्योतिबा फुले और डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर के विचारों से प्रभावित है। हालांकि कतिपय दलित लेखक मार्क्सवाद से भी प्रभावित हैं। आधुनिक संदर्भों में भारतीय दलित साहित्य का आरम्भ महाराष्ट्र में मराठी भाषा में होता है। विशेषतः मराठी दलित साहित्य का वाहक 'प्रबुद्ध भारत' पत्रिका बनी जो सन् १९६० ई० के आस-पास शुरु हुई। इसी वर्ष दलित साहित्य की पहचान बनाने वाली 'अस्मिता' और 'अस्मितादर्श' पत्रिकाएँ भी प्रकाश में आई। इसी वर्ष दलित साहित्य की पहचान बनाने वाली 'अस्मिता' और 'अस्मितादर्श' पत्रिकाएँ भी प्रकाश में आई। मराठी दलित साहित्य के प्रारम्भिक लेखकों में अन्नाभाऊ साठे, तथा नारायण सुर्वे के नाम सर्वप्रमुख हैं। मराठी के दलित साहित्यिक आंदोलन ने अन्य भारतीय भाषाओं को प्रभावित किया। सन् १९८० ई. के बाद अन्य भारतीय भाषाओं जैसे कन्नड़, गुजराती, हिन्दी, पंजाबी, तमिल, तेलगू आदि में भी दलित साहित्य की गूँज फैल चुकी थी। मराठी में 'दलित साहित्य' आधुनिक काल में ही प्रचलित हुआ और इस साहित्यिक आंदोलन की वैचारिक प्रेरणा डॉ. भीमराव अम्बेडकर एवं महात्मा फुले आदि के विचारों तथा उनके द्वारा चलाए गए सामाजिक-राजनीतिक आंदोलनों से मिली। लेकिन परंपरा रूप में मराठी दलित साहित्य ने स्वयं को मराठी भक्त कवियों, विशेष रूप से चोखा मेला, जो १४वीं शदी के प्रमुख संत-कवि से जोड़ा। साथ ही भक्त नामदेव, एकनाथ, समर्थ रामदास आदि की परंपरा को मराठी दलित साहित्य ने अपनाया। मराठी के दलित लेखकों में शरण कुमार लिंबाले, लक्ष्मण गायकवाड़, दया पवार, लक्ष्मण माने, शंकरराव खरात, बाबूराव बागुल, अर्जुन डांगले, केशव मेश्राम, नामदेव ढसाल, अरुण कांवले आदि उल्लेखनीय रचनाकार हैं। गुजराती साहित्य में प्रमुख दलित हस्ताक्षर हैं- प्रवीण गढ़वी, हरीश मंगलम्, राजू सोलंकी, दलपत चौहान, जयंत परमार, मोहन परमार आदि। कन्नड़ भाषा के दलित लेखकों में सिद्ध लिंगप्पया, मोगली गेणश, तमिल भाषा के रामास्वामी नायकर तथा पेरियार और पंजाबी के गुरुदयालसिंह आदि प्रमुख हैं, जिन्होंने दलित साहित्य के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है।

हिन्दी का दलित साहित्य

हिन्दी के दलित साहित्य लेखन की परंपरा को हम सुविधा के लिए दो भागों में विभक्त कर सकते हैं- १. स्वतंत्रता पूर्व काल का दलित साहित्य २. स्वाधीनता कालीन दलित साहित्य।

स्वतंत्रतापूर्व काल का दलित साहित्य

'दलित साहित्य' की एक अखंड परंपरा हिन्दी में विद्यमान है। हिन्दी साहित्य का आरम्भ एक हजार ईस्वी के आस-पास या उससे कुछ पहले माना जाता है। हिन्दी साहित्य के आदिकाल में ही सिद्धों तथा नाथों की रचनाओं में दलित चेतना के दर्शन होते हैं। इनमें सरहपा, जालंधरनाथ और गोरखनाथ आदि का संबंध दलित वर्ग से था। इसी समय महाराष्ट्र में नाथ-पंथ और वारकरी संप्रदाय क्रांतिकारी वाणी का सृजन कर रहा था। संत नामदेव हिन्दी, पंजाबी और मराठी के बीच की कड़ी हैं, जिनकी रचनाएँ 'आदिग्रंथ' में संकलित हैं। आदिकालीन नाथ-सिद्धों की रचनाओं के पश्चात् भक्तिकाल जाति-पाँति व कुरीति विरोधी काल है। भक्तिकाल के महान संत कवियों में कबीर, नानक, रैदास, दादू दयाल, पलटू साहब, मलूकदास, दयाबाई, सहजोबाई आदि संत कवियों ने भारतीय समाज के सर्वाधिक प्रताड़ित हिस्सों-दलितों को अपनी वाणी द्वारा मानवीय गरिमा प्रदान की। रीतिकाल में महाकवि देव ने 'जाति विलास' नामक ग्रंथ में दलित स्त्रियों के रूप वैशिष्ट्य का आकर्षक वर्णन किया है।

आधुनिक काल में अंग्रेजी राज की स्थापना के बाद भारतीय पुनर्जागरण के क्रम में शूद्रों और उनमें भी विशेष रूप से दलितों के संबंध में नई चेतना का उन्मेष हुआ। स्वामी दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, महात्मा ज्योतिबा फुले जैसे समाज सुधारकों ने जाति-प्रथा का विरोध किया और इस क्रम में मानव-मानव के बीच भाईचारे का आग्रह किया। आधुनिक काल के आरम्भ से ही दलित पीड़ा की अभिव्यक्ति किसी न किसी रूप में हिन्दी साहित्य में होती रही। हिन्दी साहित्य में 'दलित साहित्य' का उद्‌भव सितंबर, सन् १९१४ ई. की 'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित हीरा डोम की कविता 'अछूत की शिकायत' से बीसवीं सदी से हिन्दी दलित लेखन की शरुआत मानी जाती है। इसके बाद सदी के अंत तक हिन्दी साहित्य में हजारों ऐसी रचनाएँ रची गई हैं, जिनमें दलितों की पीड़ा की अभिव्यक्ति होती रही है। पिछले दो-तीन दशकों से 'दलित साहित्य' एक प्रमुख प्रवृति के रूप में उभर आया है। बीसवीं सदी के हिन्दी साहित्य पर दृष्टिपात करेंगे तो पता चलता है, कि हिन्दी साहित्य में दलित चेतना का स्वर हमेशा मौजूद है। दलितों की दशा पर ध्यान केंन्द्रित करने वाले कवियों में नाथूराम शंकर, रूपनारायण पांडेय, रामचंद्र शुक्ल, मैथिलीशरण गुप्त, सुभद्राकुमारी चौहान, सोहनलाल द्विवेदी, गया प्रसाद शुक्ल सनेही, भगवतीचरण बर्मा, सियाराम शरण गुप्त, जगन्नाथ प्रसाद मिलिंद, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' तथा माखनलाल चतुर्वेदी आदि अनेक कवियों तथा लेखकों ने दलितों पर रचनाएँ की हैं। छायावादी तथा प्रगतिवाद के दौर में निराला, पंत, महादेवी वर्मा, दिनकर आदि की रचनाओं में दलित भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई है। इसी दौर में प्रेमचंद, यशपाल, अमृतलाल नागर, भैरवप्रसाद गुप्त आदि ने 'दलित-जीवन' को केंद्र में रखकर रचनाएँ की हैं।

स्वतंत्रता पूर्व काल में कई दलित साहित्यकारों ने भी दलित साहित्य को आगे बढ़ाने में सहयोग दिया, जिनमें बिहारीलाल हरित, बुद्ध संघ प्रेमी, जैसराम गौतम, चंद्रिका प्रसाद, गया प्रसाद प्रशांत, स्वामी बोधानंद, बदलूराम, संत रामन्यायी, गोकरनलाल, नंदलाल जैसवा, छेदीलाल साथी आदि ने काव्य के साथ-साथ अन्य विधाओं में भी दलित साहित्य लिखा।

स्वाधीनता कालीन दलित साहित्य

स्वतंत्रता के बाद दलित साहित्य का सृजन अनेक विधाओं में सृजित किया गया अर्थात् स्वाधीनता के बाद दलितों को उच्च शिक्षा मिली। डॉ. अम्बेडकर जी की प्रेरणा से दलितों में जागरण के साथ ही आत्मविश्वास पैदा हुआ है। इसलिए दलित साहित्य सन् १९८० ई. के बाद अनेक विधाओं में सृजित किया गया। यहाँ दलित साहित्य की कुछ प्रमुख विधाओं और उनके रचनाकारों का परिचय संक्षेप में प्रस्तुत है-

दलित काव्य

स्वतंत्र भारत में कई प्रगतिवादी कवियों की रचनाओं में दलित भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई है। इनमें बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' की 'झूठे पत्ते', रांगेय राघव की 'अजेय खंडहर', शिवमंगल सिंह सुमन की 'प्रलय सृजन', नरेंद्रशर्मा की 'रोटियों की जंजीर', रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' की 'मंजिल', रामविलास शर्मा की 'सदियों के सोए जाग उठे' और नागार्जुन, शमशेर बहादुर सिंह, त्रिलोचन, मुक्तिबोध, केदारनाथ अग्रवाल, धूमिल आदि की तमाम ऐसी कविताएँ हैं, जिनमें दलित मुक्ति के लिए क्रांतिकारी स्वर गुंजरित हुए हैं। नागार्जुन की 'हरिजन गाथा' और धूमिल की 'मोचीराम' तो इस धारा की बहुचर्चित कविताएँ हैं। स्वाधीनता काल में प्रबंध कविता में भी दलित परंपरा के इतिहास प्रसिद्ध नायक-नायिकाओं को लेकर खण्डकाव्य तथा महाकाव्य का सृजन हुआ है। आलोच्य, युगीन दलित अस्मिता के प्रतीकों 'बुद्ध', 'एकलव्य', 'शम्बूक', 'शबरी', 'बिरसा' मुण्डा एवं डॉ. अम्बेडकर को विषय बनाकर अनेक रचनाएँ हुई। इनमें रामकुमार वर्मा का 'एकलव्य' दिनकर का 'रश्मिरथी', जगदीश गुप्त तथा नरेश मेहता कृत 'शबरी', बिहारीलाल हरित का 'भीमायण', गोकरणलाल वरुणाकर एवं माताप्रसाद सागर का 'भीमचरितमानस' आदि उल्लेखनीय हैं।

स्वयं दलित कवियों द्वारा पिछले दो दशकों में जो रचनाएँ रची गई हैं, उनमें आक्रोश के स्वर प्रबल हैं। इन कवियों में- ओमप्रकाश वाल्मीकि, प्रेमशंकर, सोहनपाल सुमनाक्षर, सुशीला टाकभौरे, लालचंद राही, पुरुषोत्तम, सत्य प्रेमी, कालीचरण स्नेही, कंवल भारती, श्यामसिंह शशि, जयप्रकाश कर्दम, माताप्रसाद, बिहारीलाल हरित, लक्ष्मीनारायण सुधाकर, माखनलाल सिंह, बुद्ध संघ प्रेमी, नैमिशराय, डॉ. दयानंद बटोही, श्योराज सिंह बेचैन, डॉ. कुसुम वियोगी, पारसनाथ, बिपिन बिहारी, डॉ. शांति यादव, ओमप्रकाश मेहरा, गौरीशंकर नागदंश, सुदेश

तनवर, चिरंजीलाल कटारिया, सूरजपाल चौहान, बाबूलाल मधुकर, असंग घोष, हरिकृष्ण संतोषी, रणजीत सिंह, विनोद कुमार उइके, श्यामलाल शर्मा, शत्रुघ्न कुमार, हेमलता माहीश्वर, बुद्धशरण हंस, गुरुप्रसाद मदन आदि ने अनेक दलित कविताएँ लिखी हैं।

दलित आत्मकथा

मराठी में रची गई दलित आत्म-कथाओं से आत्म-कथा विधा को साहित्यिक विधा के रूप में विशिष्ट पहचान मिली है। मराठी भाषा की दलित आत्म-कथाओं से प्रेरणा पाकर हिन्दी में भी दलित आत्म-कथा लेखन का आरम्भ और विकास हुआ। हिन्दी में करीब दो दशक पहले भगवान दास की सामाजिक आत्म-कथा 'मैं भंगी हूँ' प्रकाशित हुई थी। सृजनात्मक दलित आत्मकथा लेखन में जिन समकालीन दलित लेखकों ने कुछ प्रयास किए उनमें ओमप्रकाश वाल्मीकि की 'जूठन', मोहनदास नैमिशराय की ' अपने-अपने पिंजरे', सूरजपाल चौहान की 'तिरस्कृत', माताप्रसाद की 'झोपड़ी से राज भवन तक', कौशल्या बैसंत्री की 'दोहरा अभिशाप', डी. आर. जाटव की 'मेरा सफर', श्योराज सिंह बेचैन की 'बचपन मेरे कंधों पर' आदि उल्लेखनीय हैं। इन सभी लेखकों ने अपनी-अपनी आत्म-कथा के माध्यम से दलित चेतना की धारदार शब्दों में वकालत की है।

दलित कहानी

हिन्दी कथा-साहित्य में दलित जीवन को केंद्र में रखकर अनेक रचनाएँ लिखी गयी। प्रेमचंद की सद्गति', 'पूस की रात', 'कफन', 'ठाकुर का कुआँ', 'जुर्माना' में दलित जीवन की वास्तविकताओं की अभिव्यक्ति हुई है। प्रेमचंद के बाद पाण्डेय बेचन शर्मा, आचार्य चतुरसेन शास्त्री, रांगेय राघव, अमृतराय, भैरवप्रसाद गुप्त, रामदरश मिश्र, भीष्म साहनी, अमृतलाल नागर आदि की कहानियों में दलित समस्या किसी न किसी रूप में उभर कर सामने आई है।

हिन्दी दलित साहित्य की पहली कहानी कौन सी है? यह अपने आप में शोध का विषय है। दलित कथा-साहित्य पर शोध करने वाली डॉ. रजत रानी के अनुसार सतीश द्वारा रचित हिन्दी की पहली दलित कहानी 'बचनबद्ध' है, जो अप्रैल १९७५ ई. में प्रकाशित हुई थी। उसके बाद मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश वाल्मीकि, रामनिहोर विमल आदि की कहानियाँ प्रकाशित हुई। सही मायने में देखा जाए तो- १९८० के बाद से हिन्दी दलित साहित्य में कहानी लेखन के प्रति सजगता दिखाई देती है। स. १९९० ई. के बाद फुटकर कहानियों के अलावा अनेक कहानीकारों के कहानी संग्रह प्रकाशित हुए, जिनमें मोहनदास नैमिशराय का 'आवाजें', ओमप्रकाश वाल्मीकि का 'सलाम', डॉ. दयानंद बटोही का 'सुरंग', कावेरी का 'द्रोणाचार्य एक नहीं', डॉ. ठाकुर प्रसाद राही का 'साग और अन्य कहानियाँ', सत्यप्रकाश का 'चंद्रमौलि का रक्तबीज', कुसुम वियोगी का 'चार इंच की कलम', स्वरूपचंद का 'दलित अंतर्द्वन्द्व', डॉ. शत्रुघ्न कुमार का 'हिस्से की रोटी',

बुद्ध शरण हंस का 'तीन महाप्राणी', डॉ. सुशीला टॉकभौरे का' अनुभूति के घेरे' आदि उल्लेखनीय हैं।

इन कहानी संग्रहों के अलावा कुछ संपादित कहानी संग्रह भी प्रकाशित हुए। इन संपादित कहानी संग्रहों में- डॉ० कुसुम वियोगी द्वारा संपादित 'समकालीन दलित कहानियाँ', 'चर्चित दलित कहानियाँ', डॉ. एन. सिंह द्वारा संपादित 'काले हाशिए पर', रमणिका गुप्ता द्वारा संपादित 'दूसरी दुनिया का यथार्थ',डॉ. रजत रानी द्वारा संपादित 'हाशिये से बाहर' आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय कथा -संग्रह हैं। नए कहानीकारों में रत्नकुमार सांभरिया, पारसनाथ, रामनिहोर विमल, प्रेम कपाड़िया, डॉ० पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, डॉ० कुसुम मेघवाल, रजनी तिलक, अरुणकुमार और विश्वजीत आदि के नाम बहुचर्चित हैं।

दलित उपन्यास

प्रसिद्ध दलित लेखक डॉ. जयप्रकाश कर्दम का उपन्यास 'छप्पर' हिन्दी का पहला दलित उपन्यास है, जिसमें दलित जीवन का यथार्थ आंकलन हुआ है। इसके उपरांत रमणिका गुप्ता के लघु उपन्यासों 'सीता' और 'मौसी' में भी दलित चरित्रों की जीवन-गाथा चित्रित हुई है। अन्य दलित उपन्यासकारों में डॉ. रामजीलाल सहायक का 'बंधन मुक्ति', डॉ. धर्मवीर का 'पहला खत', प्रेम कपाडिया का 'मिट्टी की सौगंध', सत्य प्रकाश का 'जस-तस भई सबेर', मोहनदास नैमिशराय का 'मुक्ति पर्व', परदेशी राम वर्मा का 'तीसरी सुहागिन', श्रवण कुमार का 'प्रेमयात्रा', राणा प्रताप का 'भूमि-पुत्र', बाबूलाल मधुकर का 'पूर्ण-सत्य', हरिकिशन संतोषी का 'दूध का कर्ज', अरुण कुमार का 'दीपशिखा', कावेरी का 'काली रेत', आनंद स्वरूप का 'भ्रमर शहीद', गुरुचरण सिंह का 'कोयान की धार' आदि उल्लेखनीय है।

दलित नाटक

नाटक तथा एकांकी रचना में माताप्रसाद कृत 'अछूत का बेटा', 'धर्म के नाम पर धोखा', वीरांगना झलकारी बाई', वीरांगना उदादेवी पासी', 'प्रतिशोध', 'धर्म परिवर्तन', 'अंतहीन बेड़ियाँ', आदि उल्लेख्य हैं। मोहनदास नैमिशराय का चर्चित नाटक 'हैलो कामरेड' कई बार मंचित हो चुका है। अन्य दलित नाटककारों में- भीमसेन संतोष का 'कर्मयोगी', लाल सिंह यादव का 'शम्बूक वध', मिश्रीलाल मीना का 'एकलव्य', कर्मशील भारती का 'मान सम्मान', डॉ. एन. सिंह का 'कठौती में गंगा', विनोद कुमार का 'संवाद के पीछे', और आचार्य गुरुप्रसाद का 'भूख' आदि नाटक भी दलित नाटकों की श्रेणी में आते हैं। अन्य एकांकी नाटककारों में- मनोजकुमार, शिवनाथ बोधि, कर्मशील भारती, कंवल भारती आदि प्रमुख हैं।

दलित समीक्षा

दलित चिंतन, आलोचना एवं 'दलित विमर्श' को लेकर पिछले दशक में हिन्दी में अनेक शोध-ग्रंथ, आलेख संग्रह और समालोचना ग्रंथ प्रकाशित हो चुके

हैं। दलित साहित्य पर कई पत्रिकाओं ने विशेषांक निकाले हैं। हिन्दी में 'दलित विमर्श' इस संकल्पना को स्थापित करने का श्रेय 'हंस' के संपादक डॉ. राजेंद्र यादव को देना होगा। 'हंस' पत्रिका के दलित विशेषांक से 'दलित विमर्श' की संकल्पना को अधिक बल मिला। दलित आलोचना के क्षेत्र में डॉ. धर्मवीर, डॉ. तुलसीदास, डॉ. एन. सिंह, डॉ. चमनलाल, पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी, डॉ० विमल थोरात, डॉ. जवरीमल पारीख, श्योराज सिंह बेचैन आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। डॉ. चमनलाल द्वारा संपादित पुस्तकों में 'भारतीय साहित्य में दलित व स्त्री-लेखन, 'दलित और श्वेत साहित्य', 'दलित साहित्य एक मूल्यांकन' आदि प्रमुख हैं। डॉ. धर्मवीर ने कबीर विषयक अपनी पुस्तकों के माध्यम से दलित साहित्य विषयक चिंतन का एक पक्ष प्रस्तुत किया है। अन्य दलित समीक्षा ग्रंथों में डॉ० विजयकुमार संदेश द्वारा संपादित 'दलित चेतना और स्त्री विमर्श', श्योराज सिंह बेचैन द्वारा संपादित - 'दलित प्रक्रिया', डॉ. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी द्वारा लिखित- 'दलित इतिहास रचना और विचार', कंवल भारती द्वारा लिखित 'दलित विमर्श की भूमिका', रमणिका गुप्त की 'दलित चेतना', जयप्रकाश कर्दम की 'दलित साहित्य' और कन्हैयालाल चंचरीक की पुस्तक 'भारत में दलित आंदोलन : एक मूल्यांकन' आदि ग्रंथ दलित समीक्षा से संबंधित हैं। दलित साहित्य पर कई पत्रिकाओं ने 'विशेषांक निकाले हैं, जिनमें 'हंस', 'सारिका', 'संचेतना', 'दलित वार्षिकी', 'आजकल', 'अपेक्षा' आदि प्रमुख हैं। कई विश्वविद्यालयों में अनेक छात्र दलित साहित्य पर शोध-कार्य कर रहे हैं।

कुल मिलाकर बीसवीं सदी के आरम्भ से लेकर आजतक हिन्दी में 'दलित विमर्श' के साथ-साथ दलित साहित्य का लेखन भी विकास की ओर अग्रसर है। २१वीं सदी में हिन्दी साहित्य के इतिहास का जब पुनर्लेखन होगा, तब दलित साहित्य को निश्चय ही उसमें उचित स्थान मिलेगा, इसमें संदेह नहीं है।

संदर्भ

१. दलित चेतना और स्त्री विमर्श - सं. डॉ. विजयकुमार 'संदेश'
२. दलित साहित्य का मूल्यांकन - प्रो. चमनलाल
३. दलित साहित्य का स्त्रीवादी स्वर - विमल थोरात
४. दलित विमर्श - डॉ. नरसिंहदास वणकर,
५. भारत में दलित आंदोलन : एक मूल्यांकन - कन्हैयालाल चंचरीक,
६. विमर्श के विविध आयाम - डॉ. अर्जुन चव्हाण,
७. दलित साहित्य वेदना आणि विद्रोह (मराठी)

– डॉ. श्रीमती पूनम बोरसे
अध्यक्षा-हिन्दी विभाग, कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय
हरसुल, तहसील - त्र्यंबकेश्वर, जिला - नासिक

IMPACT OF GLOBALIZATION ON LANGUAGE AND LITERATURE

Dr. S. R. Jadhav ▪ Ms. D. D. Tambe ▪ Ms. S. R. Pachore

Prvara Rural Education Society : At the Glance

The keel of Pravara Rural Education Society was laid by founder Chairman Padmashri Vikhe Patil in the year 1964. Pravara Rural Education Society is widely recognized as Rural India's novel Education Society. Today it has blossomed into an ultra-modern and multidimensional education complex. It was Padmashri Vikhe Patil's firm conviction that rural youth play dominant role in the nation building, if they were provided quality education. He also advocated that education of a women mean education of the whole family. He knew that the success of social transformation in rural area depended a good deal on gradual upliftment and active participation of the women folk. In order to accomplish these objectives, Pravara Public School, Pravara Kanya Vidya Mandir, the residential schools were established. Bringing the girls for enrollment was an uphill task. Undaunted in spirit, Padmashri Vikhe Patil went from door to door motivating the parents; and to ease their financial constraints, he founded Late Mrs. Gangubai Eknathrao Vikhe Patil Trust. Similarly he introduced Earn and Learn Scheme to intelligent and needy students pursuing higher studies. Subsequently a chain of several institutions mushroomed in this Pravara region for providing education in Technical, Vocational, Medical streams turning the founder father's dream into a reality.

Late Dr. Eknathrao alias Balasaheb Vikhe Patil was a member of the 14th Lok Sabha of India. He took upon himself the task of translating the dreams of Padmashri into concrete realities by providing dynamic and pragmatic leadership to the society, true to the tradition of illustrious family. Such a visionary who quoted and acted as per his own maxim "Think globally and act locally", was awarded with prestigious civilian award "Padmabhushan" on 31st March 2010 for his outstanding social work.

Pravara Rural Education Society is bound to grow enormously under the dynamic leadership of Hon'ble Namdar Shri. Radhakrishna Eknathrao Vikhe Patil, whose entire life was dedicated to the service of the farmers and the rural community, He persevered to provide them educational facilities, employment, and ushered reforms in the rural agro-industries, water conservation and its distribution, agriculture, financial, and health sectors. Under his dynamic leadership the Pravara Rural Education Society is working earnestly to achieve the goals set by his father.

Starting an educational institution in such a remote place and making it run successfully was a task next to impossible. The challenge was taken by the visionary Padmashri Vikhe Patil and his associates. Further for the Higher Education he started Arts, Science and Commerce College. It was the humble beginning to provide urban amenities to rural area. Many centers of Primary, Secondary and Higher Education in and around, recognizes Pravara as an Educational hub and become a role model of rural educational center in the country.

Prashant

Literature ₹ 595

ISBN 978-93-94403-00-0

9 789394 403000

Also Available in e-Book

www.prashantpublications.com
prashantpublication.jal@gmail.com

Contents

मराठी

1. जागतिकीकरणाचा मराठी भाषा व साहित्यावर प्रभाव 13
   - डॉ. संदीप सांगळे

2. जागतिकीकरण आणि मराठी साहित्य 20
   - डॉ. शांताराम बबनराव चौधरी

3. जागतिकीकरणाचा मराठी कादंबरी होणारा प्रभाव 29
   - डॉ. सुवर्णा राजेश जाधव

4. जागतिकीकरण मराठी साहित्य आणि संस्कृती.................. 36
   - प्रा. डॉ. द. के. गंधारे

5. जागतिकीकरण आणि ग्रामीण कादंबऱ्या 42
   - डॉ. भाऊसाहेब दादासाहेब गव्हाणे

6. आदिवासी मराठी साहित्य आणि जागतिकीकरण............... 47
   - डॉ. कुंदा बाळासाहेब कवडे

7. मराठी भाषेचे यशस्वी जागतिकीकरण 52
   - प्रा. डॉ. जगदीश शेवते

8. जागतिकीकरण आणि मराठी कादंबरी........................... 58
   - प्रा. मोहन बाबूराव चव्हाण

9. जागतिकीकरण आणि मराठी महानगरीय कथा 66
   - प्रा. संदीप विलास लांडगे

10. जागतिकीकरण आणि संवादकौशल्य........................... 73
    - डॉ. अनुराधा वसंत गुजर

11. 1990 नंतरच्या स्त्री कवयित्रींच्या महानगरीय कवितेची भाषाशैली ... 77
    - डॉ. संगीता माधवराव वाकोळे

12. जागतिकीकरण आणि लोकसाहित्य 83
    - प्रा. सुनिल रामचंद्र जाधव

13. ग्रामीण कवितेत दिसणारे जागतिकीकरणाचे परिणाम 91
    - प्रा. डॉ. मंगल नामदेव हांडे

14. जागतिकीकरण मराठी भाषा, साहित्य आणि संस्कृती........... 97
- प्रा. के. एम. लोखंडे

15. जागतिकीकरण आणि संस्कृती................................ 112
- प्रा. डॉ. मीनाक्षी पुंडलिक पाटील

16. जागतिकीकरण आणि मराठी साहित्य 116
- ललिता सुभाष अहिरे

17. मुद्रणकलेचा सांस्कृतिक इतिहास.............................. 124
- प्रा. एस. ए. अनाप

18. जागतिकीकरण आणि मराठी भाषा............................ 132
- सौ. सविता म्हसू तांबे

19. जागतिकीकरण आणि मराठी भाषा............................ 141
- प्रा. श्रीमती स्वाती रमेश फापाळे

20. जागतिकीकरण- साहित्य व संस्कृती.......................... 145
- प्रा. निलेश सोमनाथ पर्वत

21. मराठी भाषा संधी व आव्हाने 149
- प्रा. आर. ए. नेटके

22. जागतिकीकरणाचा भाषा व साहित्यावरील प्रभाव 154
- प्रा. संतोष मारुती शिंदे

हिंदी

23. वैश्वीकरण और हिन्दी की वर्तमान प्रासंगिकता................. 159
- डॉ. शाहिद हुसैन, डॉ. श्रद्धा हिरकने

24. वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक, सांस्कृतिक अनुवाद के संदर्भ में 164
- डॉ. बालासाहेब सोनवणे

25. वैश्वीकरण का हिन्दी भाषा पर प्रभाव.......................... 168
- डॉ. स्मृति नरेश चौधरी

26. वैश्विकरण और हिंदी 171
- प्रा. डॉ. ऐनूर शब्बीर शेख

27. वैश्वीकरण से प्रभावित मानवी जीवन (उपन्यास 'उत्कोच' के विशेष संदर्भ में) 175
- डॉ. संदिप तपासे

28. वैश्वीकरण और जनसंचार माध्यम.............................. 182
- डॉ. पूनम जिभाऊ बोरसे

29. वैश्विकरण के परिप्रेक्ष्य में उपन्यास -'अकेला पलाश' 188
- डॉ. सरला सुर्यभान तुपे

30. वैश्वीकरण : पर्यावरण संरक्षण तथा संवर्धण ('अभंगवाणी' के संदर्भ में...) 194
- डॉ. प्रविण मन्मथ केंद्रे

31. वैश्वीकरण की आंधी से उजडी असुर जाती 199
- प्रा. देशमुख शहेनाज अ. रफिक

32. आधुनिक परिदृश्य में संचार माध्यमों में हिंदी का प्रयोग 204
- प्रा. अनिल उत्तम पारधी

33. वैश्वीकरण के युग में हिंदी भाषा.............................. 208
- डॉ. प्रवीण तुलशीराम तुपे

34. वैश्वीकरण और हिंदी भाषा 213
- प्रा. सोनाली रामदास हरदास

35. वैश्वीकरण और जनसंचार माध्यम.............................. 216
- डॉ. शिला महादू घुले

36. 'वैश्वीकरण का हिंदी भाषा पर प्रभाव' 221
- प्रा. सुनील चांगदेव काकडे

37. वैश्वीकरण और हिंदी भाषा 224
- प्रा. संतोष अंबादास बावणे

38. बीसवीं सदी के अंतिम दशक के हिंदी और मराठी के सामाजिक नाटकों में चित्रित जातीय संघर्ष 227
- डॉ. राहुल मराठे

39. वैश्वीकरण की परिभाषा एवं स्वरूप........................... 235
- डॉ. बालासाहेब धोंडीराम वाघकर

40. वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में उदय प्रकाश का साहित्य 240
- डॉ. शरद कमलेश्वर शिरोळे, प्रा. दिपाली दत्तात्रय तांबे

वैश्वीकरण और जनसंचार माध्यम

डॉ. पूनम जिभाऊ बोरसे
सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग,
कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय, हरसूल, तह. त्र्यंबकेश्वर, जि. नाशिक.

आज विश्व मे कुल मिलाकर ६५०० भाषाएँ बोली जाती हैं। भारत वर्ष बहु भाषा भाषी देश हैं, जहाँ लगभग सोलह सौ बावन भाषाएँ बोलचाल में तथा विचार-विनिमय में काम लायी जाती हैं। लेकिन इनमे हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा हैं, जो भारत के विशाल भू-भागों में बोली और समझी जाती है। अर्थात भारत की अस्सी प्रतिशत जनता हिंदी में अपने भावों तथा विचारों का आदान-प्रदान करती है। आज हिंदी दस प्रान्तों की जनभाषा और राजभाषा है। लेकिन सभी राज्यों में हिंदी का एक रूप नहीं मिलता। राष्ट्रभाषा हिंदी का प्रयोग हम आवश्यकता के अनुसार अनेक रूपों में करते है। अर्थात उसके नाना रूप प्रचलित है। जैसे वह बोली भाषा, साहित्य की भाषा और व्यवहार की भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। आम जनता के बीच आपसी बातचीत या बोलचाल में हिंदी का प्रयोग अधिक है। साहित्य भाषा का रूप मुख्यतया साहित्य रचना और पत्र-पत्रिकाओं में होता है। यह हिंदी का मानक रूप है। १४ सितंबर १९४९ को भारतीय संविधान ने हिंदी को राजभाषा के रूप में मान्यता दी है। अर्थात हिंदी का प्रयोग सरकार क सभी कार्यालयों, न्यायालयों, संसद तथा विधान मंडलों में होता है। हिंदी के इस रूप को 'प्रयोजनमूलक' या 'व्यावहारिक' हिंदी भी कहा जाता है। हिंदी भारत की जनभाषा, राष्ट्रभाषा और राजभाषा के साथ संपर्क भाषा और संचार भाषा भी है। आज अँग्रेजी के साथ-साथ समाज, राजनीति, धर्म, व्यापार और पर्यटन आदि क्षेत्रों में हिंदी कांटैक्ट लैंगवेज़ के रूप में काम आ रही है। इतना ही नहीं संचार माध्यमों की भाषा के रूप में भी इस्तेमाल हो रही है।

हिंदी की वर्तमान स्थिति में कहीं न कहीं वैश्वीकरण का योगदान है। हालांकि विश्लेषक वैश्वीकरण को मूल रूप से एक आर्थिक संकल्पना मानते हैं। जो भारतीय समाज और संस्कृति अपनी पांच हजार साल से ज्यादा पुरानी होने पर गर्व करती थी उसे वैश्वीकरण ने एक झटके में बदल दिया है। इसका असर हिंदी पर भी पड़ा है। वैश्वीकरण की मूल संकल्पना व्यापार, विदेशी निवेश द्वारा आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक व्यवस्था पर अधिग्रहण तथा आपसी समन्वय, आदान-प्रदान के माध्यम से एक मंच का निर्माण करने की प्रक्रिया के रूप में उभरती है। इन सब में भाषा की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। वैश्वीकरण

के बाद हिंदी भी एक नई भूमिका में हमारे सामने आई है। पर भारत में आज भी हिंदी की भूमिका आम आदमी के सपने और हकीकत के बीच संतुलन बनाती और हिचकोले खाती हुई भाषा की है। हिंदी की यह स्थिति दरअसल राजशक्ति और लोकशक्ति के बीच आपसी समन्वय की कमी की वजह से है। राजशक्ति इसलिए कि गणतांत्रिक भारत का संविधान उसे संघ सरकार की राजभाषा के रूप में अधिकार प्रदान करता है। मगर अंग्रेजी मानसिकता उसे यह अवसर ही नहीं देती कि वह फल-फूल सके। फिर भी, लोकशक्ति हिंदी का स्वभाव है, उसकी बुनियाद है, जिसे वह छोड़ नहीं सकती। और इसी का नतीजा है हिंदी का विकास। हिंदी वहीं ज्यादा फली-फूली है जहां लोकशक्ति का असर है।

संचार भाषा हिंदी :

हिंदी के वैश्विक स्वरूप को संचार माध्यमों में भी देखा जा सकता है। संचार माध्यमों ने हिंदी के वैश्विक रूप को गढ़ने में पर्याप्त योगदान दिया है। भाषाएं संस्कृति की वाहक होती हैं और संचार माध्यमों पर प्रसारित कार्यक्रमों से समाज के बदलते सच को हिंदी के बहाने ही उजागर किया गया। आज स्मार्टफोन के रूप में हर हाथ में एक तकनीकी डिवाइस मौजूद है और उसमें हमारी भाषा। सभी ऑपरेटिंग सिस्टमों में हिंदी में संदेश भेजना, हिंदी की सामग्री को पढ़ना, सुनना या देखना लगभग उतना ही आसान है जितना अंग्रेजी की सामग्री को। हालांकि कंप्यूटरों पर भी हिंदी का व्यापक प्रयोग हो रहा है और इंटरनेट पर भी, लेकिन मोबाइल ने हिंदी के प्रयोग को अचानक जो गति दे दी है, उसकी कल्पना अभी पांच साल पहले तक किसी ने नहीं की थी। इंटरनेट पर भारतीय भाषाओं की सामग्री की वृद्धि दर प्रभावशाली है। अंग्रेजी के उन्नीस फीसद सालाना के मुकाबले भारतीय भाषाओं की सामग्री नब्बे फीसद की रफ्तार से बढ़ रही है।

जनसंचार माध्यमों में हिंदी :

वर्तमान युग में संचार के सभी साधनों और माध्यमों में हिंदी का प्रयोग हो रहा है। अर्थात जनसंचार के इन माध्यमों की भाषा हिंदी बन चुकी है और बनती जा रही है। संचार के इन सभी साधनों और माध्यमों में मानक भाषा और राजभाषा हिंदी को ही अपनाया जा रहा है। संचार के इन समस्त माध्यमों को हम सुविधा के लिए निम्न भागों में विभाजित कर सकते है-

अ) **दृश्य संचार माध्यम :** इस माध्यम के अंतर्गत दूरदर्शन, फिल्मे तथा विडियो आदि आते है।

ब) **श्रव्य संचार माध्यम :** संचार के इस माध्यम के अंतर्गत रेडिओ, दूरदर्शन, टेलीफोन, वायरलेस मोबाइल आदि आते है।

क) **शब्द संचार माध्यम :** इस माध्यम के अंतर्गत समाचार पत्र, पत्र-पत्रिकाएँ, पुस्तके, टेलिप्रिंटर तथा फैक्स आदि आते है।

उपर्युक्त प्रमुख संचार माध्यमों में प्रयुक्त हिंदी भाषा का विवरण संक्षेप में प्रस्तुत है -

आकाशवाणी (रेडिओ) में हिंदी :

रेडिओ अर्थात आकाशवाणी एक ऐसा संचार माध्यम है, जो ध्वनि पर आधारित है। ध्वनि के द्वारा हम अपने विचार दूसरों तक पहुँचा सकते है। रेडिओ की एक विशेषता यह है की रेडिओ से प्रसारित कार्यक्रम को निरक्षर व्यक्ति भी समझ सकता है। समाचार पत्रों का प्रसार शहरों तक ही सीमित है, जबकि रेडिओ ग्रामीण इलाकों में भी सुलभ है। इटली के प्रसिद्ध वैज्ञानिक मारकोनी ने रेडिओ का आविष्कार किया था। भारत मे रेडिओ की स्थापना सन १९२७ में हुई थी। सन १९३६ में रेडिओ का नाम 'ऑल इंडिया रेडिओ' पड़ा। स्वतंत्रता के बाद इसका नाम 'आकाशवाणी' पड़ा। दूरदर्शन के प्रसारण के पूर्व भारत में रेडिओ सबसे प्रभावीशाली सूचना माध्यम था। हिंदी के प्रचार प्रसार में रेडिओ की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। रेडिओ के माध्यम से ध्वनि नाटकों को नवजीवन प्राप्त हुआ। रेडिओ के अन्य हिंदी कार्यक्रमों के अंतर्गत संगीत, परिचर्चा, रेडिओ नाटक, लोकसंगीत, खेती और गृहस्थी के कार्यक्रम, विविध भारती के कार्यक्रम, समाचार बुलेटिन आदि का प्रसारण किया जाता है। आज दूरदर्शन का अत्यधिक प्रचार प्रसार होने के बावजूद भी ग्रामीण परिवेश में रेडिओ का महत्व बरकरार है।

दूरदर्शन में हिंदी :

दृश्य-श्रव्य संचार माध्यमों में दूरदर्शन अब एक सशक्त और लोकप्रिय साधन बन चुका है। घर-घर में अपनी पहुँच के कारण दूरदर्शन ने रेडिओ और फिल्मों की लोकप्रियता से आगे निकलकर अपनी अलग पहचान बनाई है। दूरदर्शन ने १५ सितंबर १९५९ को एक प्रायोगिक स्वरूप में हमारे देश में पदार्पण किया था। आगे चलकर १५ अगस्त सन १९६५ से इसका नियमित प्रसारण प्रारंभ हुआ। इसके पश्चात सन १९८० के बाद रंगीन टेलीविज़न का विचार सामने आया। सन १९८४ को ओलोम्पिक खेलों को दूरदर्शन पर दिखने के उद्देश से प्रसारण किया गया। आज देश भर में २५ मुख्य केंद्र तथा ५४० दूरदर्शन रिले केंद्र है। साइतलाइट के सहायता से अब सैकड़ों चैनलों के माध्यम से देश की जनसंख्या का ८० प्रतिशत भाग दूरदर्शन की सेवा का लाभ उठा रहा है।

दूरदर्शन के साथ हिंदी का रिश्ता प्रारंभ से ही रहा है। चाहे कवि सम्मेलन हो या किसी नाटक या धारावाहिक का प्रसारण अथवा किसी महान हस्ती का

साक्षात्कार दूरदर्शन से हिंदी संसार जुड़ गया है। दूरदर्शन के विभिन्न चैनलों की हिंदी सुनने के बाद सहज ही अनुभव किया जा सकता है कि हिंदी भाषा को कितना प्रभावित किया है। अब दूरदर्शन के माध्यम से हिंदी सशक्त हो गयी है। कई चैनलों पर हिंदी कि जगह हिंग्लिश का प्रसारण हो रहा है। बहरहाल, हिंदी ने अपनी इस उपयोगिता के अनुरूप दूरदर्शन पर अपनी संभावनाओं का भारी पैमाने पर विस्तार किया है, जिससे उसका रूप सरल, सुगम, सुबोध और सहज होता जा रहा है।

फिल्मों में हिंदी :

जनसंचार माध्यमों में फिल्मों का महत्व सर्वाधिक रहा है, क्योंकि फिल्में सर्वाधिक लोकप्रिय संचार माध्यम है। मनोरंजन के लिए अमीर-गरीब सभी लोग फिल्मों को प्राथमिकता देते है। भारतवर्ष में सिनेमा का आगमन सन १९०१ में हुआ था। इसके बाद सन १९१३ में दादासाहेब फालके ने 'राजा हरिश्चंद्र' फिल्म का निर्माण किया। सन १९३१ में भारत में पहली बोलती फिल्म 'आलम आरा' का निर्माण हुआ। इसके बाद तकनीकी स्तर पर फिल्मों में अनेक परिवर्तन हुए। देश में फिल्म एक उद्योग बन चुका है। पूरे देश मे लगभग १२ करोड़ सिनेमाघर है और प्रतिवर्ष लगभग आठ सौ से अधिक फिल्मों का निर्माण होता है। अधिकांश फिल्में हिंदी में बनाई जाती है।

हिंदी फिल्मों ने विश्व के कोने कोने में अपनी अपूर्व कला का परिचय दिया है। मुंबई, कोलकाता और चेन्नई में फिल्मों का निर्माण व्यापक स्तर पर होता है। वी. शांताराम, महबूब खान, सत्यजीत राय, राज कपूर, बी. आर. चोपड़ा, यश चोपड़ा, मनमोहन देसाई, रमेश सिप्पी आदि ने अनेक सफल फिल्मों का निर्माण किया है। हिंदी फिल्मों ने किसी भी विषय को अछूता नहीं छोड़ा है। देश-विदेशों में फिल्मों ने हिंदी का प्रचार-प्रसार व्यापक रूप से किया है। हिंदी गानों ने तो हिंदी भाषी प्रदेशों में ही नहीं देश विदेशों में भी लोकप्रियता प्राप्त कर ली है। हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में प्रतिष्ठापित करने में हिंदी फिल्मों का बड़ा योगदान रहा है।

कम्प्युटर में हिंदी :

कम्प्युटर का आविष्कार विज्ञान कि बहुत बडी उपलब्धि है। कम्प्युटर एक प्रकार से कैल्कुलेटर, टाइपराइटर और टेलीविज़न का मिला-जुला रूप है। सन १८२२ में ब्रिटिश गणितज्ञ चार्ल्स बेबेज ने छोटासा गणक यंत्र तैयार किया था जिसका विकसित रूप सन १९४६ में कम्प्युटर के रूप में सामने आया। भारत में पहला कम्प्युटर सन १९५५ में भारतीय सांख्यिकी संस्थान कोलकाता में आया और सन १९६४ में प्रथम भारतीय कम्प्युटर तैयार किया गया। आज भारत में चालीस से अधिक संस्थाएं कम्प्युटर का निर्माण कर रही है। कम्प्युटर ने जादूगर कि तरह

कार्यालयों, उद्योगों, संस्थानों और घरों में अपने पैर जमा लिए है और इतना ही नहीं संचार जगत में क्रांति उत्पन्न कर दी है। कम्प्युटर कि सहायता से लगभग सभी प्रकार के कार्य सिद्ध किए जा सकते है। कम्प्युटर से सबसे अधिक प्रभावित हुआ है- संचार माध्यम और इसी कारण सूचना तकनीक का निरंतर विकास हुआ है। कम्प्युटर में हिंदी के प्रयोग की संभावनाएँ बढ़ रही है। आज कम्प्युटर के द्वारा हिंदी का प्रचार-प्रसार तेजी से हो रहा है। हिंदी का प्रयोग आज इंटरनेट और ईमेल में संभाव हो गया है तथा हिंदी में अनेक पोर्टल भी प्रारंभ हो गए है। हिंदी मे कई सॉफ्टवेअर भी तैयार हो चुके है। राजभाषा विभाग ने हिंदी में अनेक सॉफ्टवेअर तैयार किए है, जिससे हिंदी शिक्षण के लिए सुविधा हो सकती है। इसी प्रकार आई आई टी हैदराबाद और कानपुर ने अँग्रेजी-हिंदी अनुवाद के सॉफ्टवेअर तैयार किए है। इस प्रकार कम्प्युटर ने भी हिंदी के प्रचार-प्रसार में अमूल्य योग दिया है।

पत्रकारिता में हिंदी :

पत्रकारिता दैनिक जीवन की प्रमुख घटनाओं का संकलन और आकलन है। आज पत्रकारिता के उद्योग में लाखों कर्मचारी, संवाददाता, संपादक और आलेखक आदि कार्यरत है। पत्रकारिता केवल सूचना देने का काम नहीं करती बल्कि वह भाषा गढ़ती है और भाषा का परिष्कार भी करती है। समाचार पत्रों ने संचार भाषा हिंदी को समृद्ध बनाने का काम किया है। स्वतंत्रतापूर्व काल में छपे हुए हिंदी के पत्र-पत्रिकाओं ने हिंदी भाषा का विकास और परिष्कार करने का महत्वपूर्ण काम किया है। स्वतंत्रता के पश्चात पत्रकारिता का विस्तार हुआ और पत्रकारिता एक व्यवसाय का रूप ले चुकी है। इस दौर के पत्रों में हिंदी भाषा का मानक रूप मिलता है।

संचार भाषा से विश्वभाषा के रूप में हिंदी :

स्वतंत्रता पूर्व काल में हिंदी बोली भाषा के साथ साथ साहित्य की भाषा थी। राष्ट्रभाषा के रूप में भी इसका स्थान अक्षुण्ण था। लेकिन स्वतंत्रता के पश्चात वह राजभाषा, जनभाषा, संपर्क भाषा और संचार माध्यमों की भाषा भी कहलाने लगी। आज हिंदी के प्रचार-प्रसार का दायरा देखे तो वह विश्व की दूसरी बड़ी भाषा है। भारत तथा विदेशों में हिंदी बोलने और संझनेवालों की संख्या लगभग साठ करोड़ है। विश्व के लगभग १५० विश्वविद्यालयों में हिंदी के अध्ययन और अध्यापन की सुविधा है। मॉरीशस, फ़िजी, गुयाना, सूरीनाम, त्रिनिदाड, कोरिया, मलेशिया, सिंगापूर, पाकिस्तान आदि देशों में हिंदी पढ़ाई जाती है। इसी प्रकार यूरोप, अमरीका, रूस, आफ्रिका आदि महाद्वीपों के अनेक देशों में भी हिंदी का अध्ययन-अध्यापन होता है।

निष्कर्ष :

कुल मिलाकर उपर्युक्त विवेचन का आशय यह है कि जनसंचार के माध्यमों ने खासकर आकाशवाणी, दूरदर्शन, कम्प्युटर, फिल्म, और पत्र-पत्रिकाओं ने हिंदी को विश्वभाषा बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। अर्थात आज हिंदी ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों कि भाषा बन चुकी है। विशेषता प्रिंट और इलेक्ट्रोनिक मीडिया कि भाषा हिंदी है। अँग्रेजी कि तरह हिंदी ने अधिकांश संचार माध्यमों पर अपना अधिकार कर लिया है। भारत दुनिया की तीसरी महाशक्ति बनने जा रहा है। आज के वैश्वीकरण के युग में जनता की भागीदारी बढ़ाने के लिए तथा विश्व व्यापार के क्षेत्र में जनसंचार माध्यम और हिंदी अपना काम बखूबी निभा रही है। संचार भाषा हिंदी का विश्वभाषा की ओर अग्रसर होने का हमे गर्व है।

संदर्भ ग्रंथसूची :

१. प्रयोजनमूलक हिंदी, डॉ. कमलकुमार बोस
२. प्रयोजनमूलक हिंदी, डॉ. कैलाशचंद्र भाटिया
३. हिंदी भाषा का स्वरूप विकास, डॉ. जगतपाल शर्मा
४. हिंदी विविध व्यवहार की भाषा, डॉ. सुवास कुमार
५. राष्ट्रभाषा संदेश, प्रयाग
६. संचारिका, जुलाई-अगस्त २००४, औरंगाबाद
७. अनुप्रायोगिक हिंदी, डॉ. कृष्णकुमार गोस्वामी

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION

E-ISSN – 2348-7143

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION'S

RESEARCH JOURNEY

International E-Research Journal

PEER REFEREED & INDEXED JOURNAL
July 2021
Special Issue 268

माध्यम लेखन में रोजगार के अवसर

विशेषांक संपादक
डॉ. पूनम बोरसे
हिंदी विभागाध्यक्ष,
महात्मा गांधी विद्यामंदिर संचालित कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
हरसूल, तह. त्र्यंबकेश्वर, जिला. नासिक (महाराष्ट्र)

मुख्य संपादक : डॉ. धनराज धनगर

RESEARCH JOURNEY

COSMOS IMPACT FACTOR

Search

REQUEST IF

Category

Journal Detail

Journal Name	RESEARCH JOURNEY
ISSN/EISSN	2348-7143
Country	IN
Frequency	Quarterly
Journal Discipline	General Science
Year of First Publication	2014
Web Site	www.researchjourney.net
Editor	Prof. Dhanraj Dhangar & Prof. Gajanan Wankhede
Indexed	Yes
Email	researchjourney2014@gmail.com
Phone No	+91 7709752380
Cosmos Impact Factor	2015 : 3.452

SAMPLE CERTIFICATE

SAMPLE EVALUATION SHEET

SIF
GLOBAL IMPACT FACTOR

Due to large number of application please allow us time to update your

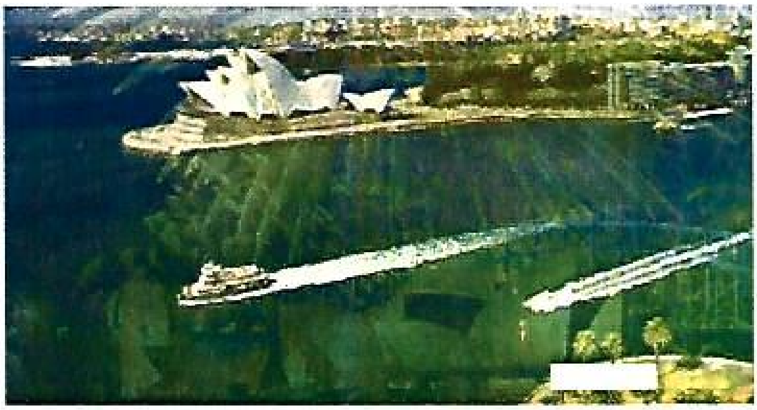

Research Journey

SJIF 2019:
6.625

Area: Multidisciplinary

Evaluated version: online

Previous evaluation SJIF

2018: 6.428
2017: 6.261
2016: 6.087
2015: 3.986

The journal is indexed in:

SJIFactor.com

Basic information

Main title	**Research Journey**
Other title [English]	Research Journey
Abbreviated title	
ISSN	2348-7143 (E)
URL	http://WWW.RESEARCHJOURNEY.NET
Country	India
Journals character	Scientific
Frequency	Quarterly
License	Free for educational use
Texts availability	Free

Contact Details

Editor-in-chief	Prof. Dhanraj Dhangar
	M.G.V.'S ARTS & COMMERCE COLLEGE, YEOLA, DIST NASHIK
	India
Publisher	MRS. SWATI SONAWANE

Get Involved

Home
Evaluation Method
Journal List
Apply for Evaluation/Free Service
Journal Search

Recently Added Journals

Resea	
ISSN	2348-714
Country	India
Frequency	Quarterly
Year publication	2014-201
Website	researchj
Global Impact and Quality Factor	
2014	0.565
2015	0.676

Impact Factor – 6.625 **E-ISSN – 2348-7143**

INTERNATIONAL RESEARCH FELLOWS ASSOCIATION'S

RESEARCH JOURNEY

International E-Research Journal

PEER REFEREED & INDEXED JOURNAL

July 2021

Special Issue 268

माध्यम लेखन में रोजगार के अवसर

विशेषांक संपादक
डॉ. पूनम बोरसे
हिंदी विभागाध्यक्ष,
महात्मा गांधी विद्यामंदिर संचालित कला, विज्ञान एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
हरसूल, तह. त्र्यंबकेश्वर, जिला. नासिक (महाराष्ट्र)

मुख्य संपादक : डॉ. धनराज धनगर (येवला)

Our Editors have reviewed papers with experts' committee, and they have checked the papers on their level best to stop furtive literature. Except it, the respective authors of the papers are responsible for originality of the papers and intensive thoughts in the papers. Nobody can republish these papers without pre-permission of the publisher.

- Chief & Executive Editor

SWATIDHAN INTERNATIONAL PUBLICATIONS

For Details Visit To : **www.researchjourney.net**

*Cover Photo (Source) : Internet

© All rights reserved with the authors & publisher

Price : Rs. 1000/-

E-ISSN : 2348-7143
July-2021

Editorial Board

Chief Editor -

Assist. Prof. (Marathi)
MGV's Arts & Commerce College,
Yeola, Dist – Nashik [M.S.] INDIA

Executive Editors :
Nashikroad (English)
Kinwat (Hindi)
Bhusawal (Marathi)
Goa (Konkani)

Co-Editors -

- **Prof. Dr. Mohan** - Professor, Dept. of Hindi, Delhi University, **Delhi, India**
- **Prof. Milena Brotaeva** - Head, Classical East Department, Sofia University, **Sofia, Balgeria**
- **Dr. R. S. Sarraju** – Center for Translation Studies, University of Hydeabad, **Hydrabad, India**
- **Mr.Tufail Ahmed Shaikh**- King Abdul Aziz City for Science & Technology, Riyadh, **Saudi Arabia.**
- **Dr. Anil Dongre** - Head, Deptt. of Management, North Maharashtra University, Jalgaon **[M.S.] India**
- **Dr. Shailendra Lende** - R.T.M. Nagpur University, Nagpur **[M.S.] India**
- **Dr. Dilip Pawar** - BoS Member (SPPU), Dept. of Marathi, KTHM College, Nashik. **[M.S.] India**
- **Dr. R. R. Kazi** - North Maharashtra University, Jalgaon **[M.S.] India**
- **Prof. Vinay Madgaonkar** - Dept. of Marathi, Goa University. **Goa, India**
- **Prof. Sushant Naik** - Dept. of Konkani, Govt. College, Kepe, **Goa, India**
- **Dr. G. Haresh** - Associate Professor, CSIBER, Kolhapur **[M.S.] India**
- **Dr. Munaf Shaikh** - N. M. University, Jalgaon & Visiting Faculty M. J. C. Jalgaon **[M.S.] India**
- **Dr. Sanjay Kamble** - BoS Member Hindi (Ch.SU, Kolhapur), T.K. Kolekar College, Nesari **[M.S.]**
- **Prof. Vijay Shirsath**- Nanasaheb Y. N. Chavhan College, Chalisgaon **[M.S.] India**
- **Dr. P. K. Shewale** - Vice Principal, Arts, Science, Commerce College, Harsul **[M.S.] India**
- **Dr. Ganesh Patil** - M.V.P.'s, SSSM, ASC College, Saikheda, Dist. Nashik **[M.S.] India**
- **Dr. Hitesh Brijwasi** - Librarian, K.A.K.P. Com. & Sci. College, Jalgaon **[M.S.] India**
- **Dr. Sandip Mali** - Sant Muktabai Arts & Commerce College, Muktainagar **[M.S.] India**
- **Prof. Dipak Patil** - S.S.V.P.S.'s Arts, Sci. and Com. College, Shindhkheda **[M.S.] India**
- **Dr. K. P. Waghmare** - Librarian, Anandibai Raorane College, Sawantwadi **[M.S.] India**

Advisory Board -

- **Dr. Marianna Kosic** - Scientific-Cultural Institute, Mandala, **Trieste, Italy.**
- **Dr. M.S. Pagare** - Director, School of Languages Studies, North Maharashtra University, Jalgaon
- **Dr. R. P. Singh** -HoD, English & European Languages, University of Lucknow **[U.P.] India**
- **Dr. S. M. Tadkodkar** - Rtd. Professor & Head, Dept. of Marathi, Goa University, **Goa, India.**
- **Dr. Pruthwiraj Taur** - Chairman, BoS., Marathi, S.R.T. University, Nanded.
- **Dr. N. V. Jayaraman** - Director at SNS group of Technical Institutions,**Coimbatore**
- **Dr. Bajarang Korde** - Savitribai Phule Pune University **Pune, [M.S.] India**
- **Dr. Leena Pandhare** - Principal, NSPM's LBRD Arts & Commerce Mahila Mahavidyalaya, Nashik Road
- **Dr. B. V. Game** - Principal, MGV's Arts and Commerce College, Yeola, Dist. Nashik.

Review Committee -

- **Dr. J. S. More** - BoS Member (SPPU), Dept. of Hindi, K.J.Somaiyya College, Kopargaon
- **Dr. S. B. Bhambar,** BoS Member Ch.SU, Kolhapur, T.K. Kolekar College, Nesari
- **Dr. Uttam V. Nile** - BoS Member (NMU, Jalgaon) P.S.G.V.P. Mandals ACS College, Shahada
- **Dr. K.T. Khairnar**- BoS Member (SPPU), Dept. of Commerce, L.V.H. College, Panchavati
- **Dr. Vandana Chaudhari** KCE's College of Education, Jalgaon
- **Dr. Sayyed Zakir Ali** , HoD, Urdu & Arabic Languages, H. J. Thim College, Jalgaon
- **Dr. Sanjay Dhondare** – Dept. of Hindi, Abhay Womens College, Dhule
- **Dr. Amol Kategaonkar** – M.V.P.S.'s G.M.D. Arts, B.W. Commerce & Science College, Sinnar.

Published by –
© **Mrs. Swati Dhanraj Sonawane, Director, Swatidhan International Publication, Yeola, Nashik**
Email : swatidhanrajs@gmail.com **Website :** www.researchjourney.net **Mobile :** 9665398258

E-ISSN : 2348-7143
July- 2021

INDEX

No.	Title of the Paper	Author's Name	Page No.
*	संपादकीय	डॉ. पूनम बोरसे	05
1	समाचार पत्रों में 'पृष्ठ सज्जा' की भूमिका	डॉ.जिभाऊ मोरे	06
2	फीचर लेखन की परिभाषा एवं अवधारणा	डॉ. रमा सिंह	08
3	मीडिया जगत् की नवीनतम विधा : फीचर	डॉ. अशोक मराठे	13
4	फीचर लेखन की परिभाषा और रेडियो फीचर	डॉ. निशाराणी देसाई	17
5	संचार क्रांति एवं सूचना प्रोद्योगिकी का शिक्षा के क्षेत्र में महत्त्व	डॉ. गीता परमार	20
6	नव माध्यम : कंटेंट लेखन, ब्लॉग लेखन में रोजगार के अवसर	श्रीमती ज्योति	24
7	समाचार लेखन की भाषा-शैली	डॉ. सजित खांडेकर	29
8	समाचार लेखन एवं रोजगार के अवसर	प्रा. कैलास बच्छाव	33
9	फीचर लेखन : एक कला और विज्ञान	डॉ. मल्लिनाथ बिराजदार	36
10	समाचार पत्रों के स्वामित्व, प्रबंधन और मुद्रण में रोजगार के अवसर	डॉ.योगिता हिरे	40
11	फीचर लेखन : एक अवधारणा	डॉ. बबलू कुमार	44
12	संचार क्रांती एवं सूचना प्रौद्योगिकी का भविष्य	डॉ. विजयप्रकाश शर्मा	48
13	संचार क्रांती एवं सूचना प्रौद्योगिकी का भविष्य	डॉ. तृप्ती पटेल	52
14	प्रतिवेदन लेखन के प्रकार एवं उपयोगिता	डॉ. पूनम बोरसे	56
15	अनुवाद के क्षेत्र में रोजगार की संभावनाएँ	डॉ. यशोदा मेहरा	60
16	फीचर फिल्म लेखन के सामग्री संकलन स्त्रोत	डॉ. वाल्मीक सूर्यवंशी	65
17	विरासत पर्यटन के विकास में नवसंचार माध्यमों की भूमिका	डॉ. प्रणव देव	69
18	नवसंचार माध्यमों (न्यू मीडिया) का महिलाओं के प्रति दृष्टीकोण	डॉ. अर्चना द्विवेदी	77
19	अनुवाद का व्यावसायिक परिप्रेक्ष्य	डॉ. गणेश शेकोकर	83
20	फीचर लेखन की अवधारणा और रोजगार की संभावनाएँ	डॉ. पोपट बिरारी	87
21	ऑनलाइन शिक्षा में रोजगार के अवसर	रामसिया चर्मकार	90
22	नव माध्यम - ब्लॉग लेखन	डॉ. योगिता घुमरे	96
23	फिचर लेखन की परिभाषा एवं अवधारणा	डॉ. जयश्री कुमावत	99
24	माध्यम लेखन : फीचर के विभिन्न प्रकार	डॉ. एम.पी.भवर	103
25	रेडियो फीचर का महत्त्व	डॉ. रघुनाथ वाकळे	108
26	फिचर लेखन का अर्थ, परिभाषा, स्वरुप एवं अवधारणा	युवराज गातवे	111
27	जनसंचार माध्यमों का समाज पर प्रभाव	डॉ. विष्णु राठोड	114
28	फीचर लेखन - एक कला	डॉ. शैलजा जायसवाल	118
29	बैंक, ई-बैंकिंग और भाषा	प्रा. शांताराम वळवी	120
30	फीचर : परिभाषा एवं अवधारणा	प्रा. हर्षल बच्छाव, प्रो. डॉ. अनिता नेरे	126
31	फीचर लेखन : स्वरूप तथा प्रकार	प्रा.दिपाली तांबे, डॉ.शरद शिरोळे	130
32	पृष्ठसज्जा के विविध अंग	प्रा. वृषाली वडगे	134
33	फीचर लेखन की परिभाषा और प्रकार	प्रा. समाधान गांगुर्डे	137
34	संचार क्रांति एवं सूचना प्रौद्योगिकी का भविष्य	प्रा.राजेंद्र जाधव	142
35	माध्यम विधा: एक परिचय	प्रा. राकेश वळवी, प्रा. संतोष पगार	145
36	प्रतिवेदन : अवधारणा, स्वरूप एवं महत्त्व	प्रो. अनिता नेरे, प्रा.अनिता राजबंशी	149

37	फीचर लेखन : स्वरुप एवं प्रक्रिया	प्रा. संतोष पगार, प्रा. राकेश वळवी	155
38	हिंदी सिनेमा में रोजगार के अवसर	प्रा.रवींद्र ठाकरे, प्रो. डॉ. अनिता नेरे	159
39	फीचर का अर्थ, परिभाषा और अंग	डॉ. संदीप देवरे	162
40	भाषा शिक्षण में रोजगार के अवसर	प्रा. दिनेश अहिरे	165
41	ई कैश, तथा डिजिटल हस्ताक्षर, नेटबैंकिंग	डॉ. भावेश जसानी	167
42	फीचर लेखन	प्रा. मनोजकुमार वायदंडे	173
43	मीडिया क्षेत्र में रोजगार अवसर : सकारात्मक दृष्टि	डॉ. मनिषा नाठे	176
44	फीचर लेखन	डॉ. मनीषा मुगळीकर	179
45	गुगल ॲप्स व गुगलच्या विविध सेवा	डॉ. प्रकाश शेवाळे	182
46	फेसबुक : आधुनिक संवाद माध्यम	डॉ. गजानन भामरे	186
47	दूरचित्रवाणी आणि रोजगार संधी	प्रा. गणेश बारगजे	189
48	ब्लॉग लेखन स्वरूप व उपयोगिता	प्रा. सोमनाथ पावडे	193
49	Job Opportunities in Social Media for Language Students	Dr. Rajani Patil	197
50	Significance of English in ICT based Career and Job Profiles	Dr. Premji Parmar	202

Our Editors have reviewed papers with experts' committee, and they have checked the papers on their level best to stop furtive literature. Except it, the respective authors of the papers are responsible for originality of the papers and intensive thoughts in the papers. Nobody can republish these papers without pre-permission of the publisher.

- Chief & Executive Editor

E-ISSN : 2348-7143
July- 2021

संपादकीय....

लिखना एक कला है, और यह कला मनुष्य को जन्मजात प्राप्त नहीं होती। इसे मनुष्य प्रगाढ़ साधना के द्वारा ही ग्रहण कर सकता है। इस दृष्टिकोण के आधार पर यदि माध्यम लेखन के विभिन्न रूपों की ओर दृष्टि डाली जाए तो इन्होने सृजनात्मकता को एक दिशा दी है। समाचार,फीचर,चित्रवृत्ति,साक्षात्कार, वार्ता, कमेंट्री आदि के लिए या लेख तथा पटकथन लेखन में लेखक सृजनात्मकता को एक नई पहचान दी

मीडिया में आज जितने रोजगार के अवसर है उतने किसी अन्य क्षेत्र या विषय में नहीं है। मीडिया का क्षेत्र आज बेहद संवेदनशील हो गया है। इसलिए रोजगार संभावनाएं आज कार्यकुशलता, योग्यता तथा रचनात्मक क्षमता पर निर्भर करती है। मीडिया में आज एक से बढ़कर एक अवसर मौजूद है तथा चुनौतियाँ उन अवसरों के चुनाव से ही शुरू हो जाती है। टीवी, रेडियो, समाचारपत्रों के हिंदी संस्करणों में हुई बढ़ोतरी के कारण इन क्षेत्रों में भी नौकरियों के अवसर कई गुना बढ़े है। हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में संपादकों, पत्रकारों, संवाददाताओं, उप संपादक, प्रूफ रीडर आदि की आवश्यकता होती है। इन लोगों का अधिकांश कार्य हिंदी में होता है। हिंदी में शैक्षणिक योग्यता रखने के साथ-साथ पत्रकारिता, जनसंचार में डिग्री, डिप्लोमा की योग्यता के साथ एक से अधिक स्थानों पर नौकरी के अवसर पा सकते है।

भारत में आज कई क्षेत्रों में पढे-लिखे बेरोजगार युवा है। युवाओं को उनकी छात्र दशा में ही उचित मार्गदर्शन कर माध्यम लेखन में रोजगार के अवसर इस विषय पर यदि मार्गदर्शन किया गया तो छात्र उस विषय में अधिक रुची लेकर भविष्य में अपनी मंजिल पा सकते है। हिंदी भाषा इस समस्या का हल है।आज विज्ञान को साथ लेकर हिंदी ने अनेक क्षेत्रों में रोजगार के अवसर उपलब्ध कर दिये हैं। हिंदी भाषा का कौशल प्राप्त करनेवाले छात्रों को रोजगार के अनगिनत अवसर मिल सकते हैं । इनमें दृक-श्राव्य माध्यमों तथा सूचना प्रौद्योगिकी,केंद्रीय कार्यालयों,विविध निगमों,विभिन्न वित्त संस्थाओं,राष्ट्रीय सेवा, उद्योग - व्यापारों,बैंक,फिल्म,अनुवाद,शिक्षक,अध्यापक आदि अनगिनत क्षेत्रों में उत्तम रोजगार प्राप्त हो सकता है। इतना ही नहीं भारत के बाहर विदेशों में भी हिंदी भाषा से विपुल रोजगार के सुअवसर प्राप्त हो रहे हैं । साथ ही संगणक संचालक, लिपिक से लेकर हिंदी 'अधिकारी,निर्देशक,जनसम्पर्क अधिकारी, लेखक, आशुलिपिक,सूत्र-संचालक,उद्घोषक आदि के अलावा राजनीति,खेल जगत, कृषि जगत,विधि विभाग आदि अनेक क्षेत्रों में उच्चतम एवं सर्वोत्तम पदों पर संतोषजनक रोजगार प्राप्त हो सकता है ।

इस राष्ट्रीय वेबिनार के लिए महात्मा गांधी विद्यामंदिर संस्था के जनरल सेक्रेटरी श्रद्धेय डॉ. प्रशांतदादा हिरे, भूतपूर्व शिक्षक विधायक मा.डॉ.अपूर्वभाऊ हिरे,युवानेता मा.डॉ.अद्वय आबा हिरे, मा. डॉ.योगिताजी हिरे आपका मार्गदर्शन मिला। इसके लिए मैं हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। साथ ही महात्मा गांधी विद्यामंदिर संस्था के न्यासी प्राचार्य डॉ.बापुसाहब जी जगदाले, मानविकी विद्या संकाय की अधिष्ठाता प्रो.डॉ.मृणाल जी भारद्वाज, हरसूल महाविद्यालय के प्राचार्य डॉ. मोतिराम जी देशमुख,महात्मा गांधी विद्यामंदिर संस्था के हिंदी अध्ययन मण्डल के सभी सदस्य, हरसूल महाविद्यालय परिवार,रिसर्च जर्नी पत्रिका का के संपादक डॉ.धनराज धनगर आदि मनीषियों की मैं आभारी हूँ ।

यह ग्रंथ रोजगार की तलाश में भटकते युवाओं को ठहराव सिद्ध होगा ऐसी अभिलाषा है। हिंदी भाषा रोजी-रोटी की समस्या को हल करने में अधिक सक्षम बने इन्ही विचारों के साथ कहना चाहती हूँ-

"हिंदी हमारी आन है,शान है हिंदी ।
हिंदुस्थानियों का सरताज हैं हिंदी ।
लोगों से लोगों तक रोजगार पहुँचाने का
माध्यम है हिंदी ॥"

- डॉ. पूनम बोरसे (विशेषांक संपादक)

MULTIDISCIPLINARY STUDIES: PROSPECTS AND PROBLEMS IN MODERN ERA

ISBN: 978-920-5-20223-5

Chief Editor
Dr. Suja Sundram

Editors
Dr. S. Ayyappan
Ms. S. Julia Selva Sundari
Dr. K. Bhavana Raj
Prof. Gargi Gohel
Mr. Davood Nihal

CONTENTS

S. No.	Title	Page No.
1.	A STUDY ON FACTORS INFLUENCING CONSUMER PREFERENCES TOWARDS ORGANIC FOOD PRODUCTS *Dr. R.V. Suresh, Dr. B. Hannah & Dr. Jitendra Chouhan*	1
2.	A DESCRIPTIVE STUDY ON SERVICE QUALITY AND CUSTOMER PERCEPTION TOWARDS DIGITAL MARKETING *Dr. M.J. Sathish Kumar, Dr. Rajendra Subhash Jarad & Dr.S.Karthik*	9
3.	CUSTOMER PERCEPTION TOWARDS ROLE OF E- BANKING SERVICES IN CURRENT SCENARIO *Dr K Bhavana Raj, Dr. M. Anusuya & Mr. Devanand Kashinath Mandavdhare*	16
4.	AN EMPIRICAL STUDY ON FACTORS AFFECTING INVESTMENT DECISION IN INDIAN CAPITAL MARKET *Dr. V.C. Shanker, Dr Sanjay Kumar & Dr D Deepa*	24
5.	DIVIDEND POLICY AND ITS IMPACT ON PERFORMANCE OF INDIAN INFORMATION TECHNOLOGY COMPANIES *Dr. Sonia Kaushik, Dr. S. Umamaheswari & P.T.J.K. Lilian*	32
6.	A STUDY ON WORK LIFE BALANCE OF WOMEN EMPLOYEES WITH REFERENCE TO TEACHING FACULTIES *Mrs. Licy Varghese, Dr. M. Durgarani & Dr. Ajit Kumar*	39
7.	CONFLICTS OF ETHNICITY IN THE WORKS OF ARUDPRAGASAM'S THE STORY OF BRIEF MARRIAGE *Dr. Nancy Prasanna Joseph, Dr. V. Jagadeeswari & Dr. Hemamalini*	47
8.	HISTORIOGRAPHIC PRESENTATION IN THE WORKS OF SALMAN RUSHDIE *Dr. C. Shanmuga Priya, Dr. M. Vijayalakshmi & Aliya Parveen A Mulla*	51
9.	AN EMPIRICAL STUDY ON IMPACT OF EMPLOYEE RETENTION IN IT COMPANIES ON THE EMPLOYER BRANDING WITH REFERENCE TO CHENNAI CITY *Santosh Ram Pagare, Dr. Venkata Harshavardhan Reddy Dornadula & Dr. S. Kavitha*	56
10.	A STUDY ON INVESTORS PERCEPTION TOWARDS ONLINE TRADING *Kumar. S & Kiran. J*	64
11.	A STUDY ON PERCEPTION OF ENTREPRENEURS TOWARDS CHALLENGES IN TECHNOLOGY ADOPTION IN STARTUPS *Dr. Ganesh K Chavhan, Santosh Ram Pagare & Shailendra Kashinath Bansode*	70
12.	A STUDY ON ADOPTION OF ICT TOOLS BY STUDENTS IN HIGHER EDUCATIONAL INSTITUTIONS *Dr. Ganesh K Chavhan, Kajal D. Jaisinghani & Dr. M.A. Barote*	78
13.	A STUDY ON WORK LIFE BALANCE OF WOMEN EMPLOYEES WITH REFERENCE TO TEACHING FACULTIES DURING COVID 19 *Dr. R. Indumathy, Dr. M. Esther Kalyani Asirvadam & Galiveeti Poornima*	86

CUSTOMER PERCEPTION TOWARDS ROLE OF E- BANKING SERVICES IN CURRENT SCENARIO

Dr K Bhavana Raj Dr. M. Anusuya** Mr. Devanand Kashinath Mandavdhare****

**Assistant Professor, Department of Management Studies, Institute of Public Enterprise, Hyderabad, Telangana*

***Assistant Professor, Department of Commerce, Bishop Heber College, Trichy. (Affiliated to Bharathidasan University)*

****Assistant Professor in Economics, M. G. Vidyamandir's Arts, Science and Commerce College, Harsul, Tal. Tryambakeshwar, Dist. Nashik, Maharashtra.*

ABSTRACT

Back office automation has given way to the online, centralized, and integrated solutions that are now accessible in the Indian banking sector, technology has seen a significant transformation. Banking is no longer limited to the branches, where one was previously had to physically approach a branch in order to withdraw cash, deposit a check, or get a statement of accounts. Instead, banking may now be done online. E-banking has emerged as one of the most innovative aspects of the rise of the world's economy in recent years, thanks largely to the proliferation of internet use. The objectives of the study are to find out the factors influencing customers' perception towards e-banking service and to examine frequent use of the E-Banking Services by the respondents. 200 respondents were identified for measuring Customer perception towards role of E-Banking services in current scenario using convenient sampling technique. The data from the selected sample respondents have been collected through the Google forms. The researcher concluded that E-banking is being used by the bank in an effort to provide customers with faster service, and it also assists banks in lowering the costs associated with running their businesses.

Keywords: *E-banking; Service Quality; Customer Satisfaction; Customer- Relationship and Indian Banking Sector*

INTRODUCTION

There is a significant presence of banking institutions in every sector of economic activity. The progress and development of any economy remaindependent on the operational efficiency of the financial institutions that are present in that economy. When there is a powerful banking system in place, the funds of the general population may be pooled together and made accessible for a broad variety of investment reasons. This makes it possible for individuals to invest their money. When seen in this light, financial institutions, and more specifically banks, are regarded as the fundamental engines behind the expansion and success of an economy. These financial services are very essential to the successful operation of contemporary commerce and company. At the moment, customers may access banking services no matter where they are located in the nation. In this aspect, the function of the banking sector as a conduit for fostering the growth of a nation's economy is an essential one that banks play. In addition, banking has evolved into an essential part of people's day-to-day lives, making it impossible for them to avoid doing it. The activities of the financial sector, including banks and other financial institutions, are inextricably linked to human existence. It's possible to generally divide the banking business in India into two distinct sub-industries: the organized and the unorganized sectors. E-banking, or electronic banking, refers to the transfer of banking services through the internet. As the use of computers and the internet has become more common, banks have found that e-banking is a suitable approach to utilize in order to meet the expectations of their clients. This not only saves money in today's more competitive banking atmosphere by removing the need for costly paper handling, but it also minimizes the amount of interaction that there is between consumers and tellers, which is a significant benefit. E-banking has the potential to provide benefits over conventional banking in the areas of cost reduction and the satisfaction of consumer demand.

ELECTRONIC BANKING IN INDIAN BANKING SECTOR: AN OVERVIEW

Through the use of electronic distribution channels, there is the potential to provide alternatives for the expedited delivery of financial services to a wider variety of customers. (Kaleem and Ahmed 2008)[1].The majority of customers who start using online banking do so because they have a recurring need to pay bills and would like to do so with the least amount of effort possible. This is because internet banking makes it easy to access one's account from anywhere in the world. In addition, customers may utilize internet banking to keep tabs on their own money, check the balances of their accounts, and research the veracity of payments made by other parties. In addition to this, consumers are able to carry out financial transactions from any location in the globe when they use online banking. The widespread availability of information technology has made it feasible for electronic channels to perform a variety of financial operations that were once carried out face-to-face. This has resulted in significant time and cost savings. (Giannakoudi 1999)[2]E-cheque, also known as electronic checks, are progressively replacing traditional paper checks as the preferred method of payment. This shift has allowed financial institutions to expand their storage capacity, reduce their expenditures, and improve the quality of service they provide to their customers.. (Rose and Hudgins 2005)[3]When it comes to the ease and cheap cost of performing transactions, customers have a plethora of benefits available to them when they bank online. The most important advantage of online banking is that it enables financial institutions to strengthen their competitive position. This, in turn, enables these institutions to maintain their current customers, increase customer satisfaction, increase market share, decrease administrative and operating costs, and a variety of other advantages. (Khalfan.et al, 2006.)[4]The world's financial institutions are engaged in a heated rivalry to offer an expanding number of services and features that can be accessed via online banking platforms. This is done with the goal of ensuring that their customers are happy with the products and services they get. There has been a consistent increase in the number of customers interacting through remote channels, and to a greater extent than in the past because of the rise of e-banking and the expansion of the variety of interface options that can be used to access online banking solutions. This is due to the expansion of the variety of interface options that can be used to access online banking solutions. It is anticipated that this pattern will go on for the foreseeable future. Banks that have chosen to keep significant branch networks despite growing online competition are reorganizing the responsibilities of the personnel working in these branches in order to transition toward a culture that places a greater emphasis on forming and sustaining relationships with customers. This is being done in an effort to remain competitive in the face of growing online competition.

PROGRESS OF E-BANKING

The term "online banking" refers to an electronic payment system that allows users of a financial organization, such as a retail bank, virtual bank, credit union, or building society, to make financial transactions on the institution's website. Virtual banks, retail banks, credit unions, and building societies are examples of such financial entities. The terms "virtual banking" and "internet banking" are occasionally used interchangeably. Online banking is also known as internet banking, e-banking, virtual banking, and a few more terms. Online banking is also known as "virtual banking" at times. A client with Internet connection who wishes to use a financial institution's online banking service must first register with the institution and create a password (under a number of identities) in order to be recognized as a valid user of the service. This is required in order for the client to be authenticated as a valid user of the service.

It is an unusual occurrence for the password required for online banking to be different from the password required for telephone banking. It is presently standard practice for financial institutions to issue client

1 Kaleem, A and Ahmad, S, Bankers perceptions of Electronic Banking in Pakistan, Journal of Internet Banking and Commerce, Vol.14, No.1, 2009, pp.23-36

2 Giannakoudi, S. (1999) "Internet banking: the digital voyage of banking and money in cyberspace", Information and Communications Technology Law, Vol. 8, No. 3, pp.205–243

3 Kolodinsky, J.M., Hogarth, J.M. and Hilgert, M.A. (2004) 'The adoption of electronic banking technologies by US consumers', International Journal of Bank Marketing, Vol. 22, No. 4, pp.238–241

4 Khalfan.et.al, 2006, Factors influencing the adoption of internet banking in Oman, a descriptive case study analysis. International Journal of Financial services management. 1(2) 155-172

numbers, which are also known by a variety of different names. This occurs regardless of whether or not customers have shown an interest in using the online banking facility offered by the organization. The terms "account number" and "customer number" do not refer to the same thing in most cases. This is as a result of the fact that one customer number may be tied to a number of distinct accounts held by different customers. In addition, any debit or credit card that the customer receives from the financial institution will not have a customer number that is the same as the customer's own number. This is to protect the consumer from identity theft. In order to use online banking, a customer of the financial institution must first go to the secure website of the company. When they arrived at the destination, they would be required to log in to the online banking facility using the customer number and password that they had established earlier. Despite the fact that some of these financial institutions have included additional safety precautions in order to get access to online banking, there is no consistency in the approach that is followed by the many different kinds of financial organizations.

E-BANKING: STATUS, IMPLEMENTATION, CHALLENGES, OPPORTUNITIES

Internet banking is widely used not just in the United States but also in other nations like Singapore and Spain. There are more individuals utilizing the internet in Scandinavian countries than in any other area, and in Finland and Sweden, respectively, up to a third of customers use online banking services. The most important financial institutions in the United States continue to have the majority of market share in the internet banking sector. Only about 6 percent of people in the United States actually use the internet, despite the fact that the vast majority of people in the country have bank accounts with financial institutions that offer internet access. However, there are a small number of banks that have established and are selling their products and services entirely through the electronic distribution channels. The great majority of banks as of today have blended the current electronic delivery channels with the classic brick and mortar locations. These "virtual" or "internet only" banks may not have a branch network, but they could have a physical presence in the form of an administrative office or facilities that are not often associated with branches, such as automated teller machines (ATMs).[5].

REVIEW RELATED TO PREVIOUS STUDIES

Siriluck et al. (2003)[6], discovered that a number of Thailand's banks are in the process of implementing online banking at the present time. Banks who provide their services via this channel argue that it enables them to become more competitive and reduces the costs that are connected with offering such services. On the other hand, a significant proportion of commercial customers do not have a very upbeat perspective towards internet banking. If financial institutions are able to get an understanding of the factors that prevent their business customers from using online banking, they will be in a better position to put this sort of customer self-service technology to use. People who do not use Internet banking have a significantly higher level of concern for customer service and do not trust financial transactions that are done over Internet channels. Those who do use Internet banking appear to have a higher level of confidence in the dependability of the system, in contrast to those who do not use it. Those who do not use it appear to have a higher level of confidence in the system's dependability. People who do not utilize online banking are more likely to have a negative opinion of the adoption process and to claim that they do not have the financial resources to embrace the technology. Another significant hurdle preventing corporate consumers from adopting internet banking is a lack of adequate legal advice. The study concluded that there were a variety of factors that contributed to the expansion and widespread use of online banking, in addition to the possible consequences for financial performance.A significant proportion of commercial customers do not have a very upbeat perspective towards internet banking. If financial institutions are able to get an understanding of the factors that prevent their business customers from using online banking, they will be in a better position to put this sort of customer self-service technology to use. People who do not use Internet banking have a significantly higher level of concern for customer service and do not trust financial transactions that are done over Internet channels. Those

---

[5] Leow, Hock Bee, "New Distribution Channels in banking Services." Banker's Journal Malaysia, No.110, June 1999, 48-56

[6] SiriluckRotchanakitunmnuai, Mark Speece,(2003) "Barriers to Internet banking adoption : a qualitative study among corporate customers in Thailand", international journal of Bank marketing, Vol. 21 issue 6, July 2003.

who do not use it appear to have a higher level of confidence in the system's dependability. People who don't use internet banking are likely to have a more negative view of the process of adoption and are more likely to declare that they don't have the means to embrace the technology. One further key barrier that prevents business customers from embracing online banking is the absence of sufficient legal counsel. The researcher concluded that there were a number of variables that led to the growth and widespread usage of online banking, in addition to the potential repercussions for financial performance.

Kuchara (2012)[7]argued that customers were able to conduct their financial transactions from a wider range of locations because to innovations such as internet banking and mobile banking. This research study also highlights the fact that Internet banking has not gained as much popularity in India as was anticipated. Indian customers are wary of their financial assets and banking services provided via electronic channels due to the country's continuing tradition of thriftiness. However, these services may now be accessed at any time and from any location, making them more appealing to Indian consumers.

Venugopal (2013)[8]investigated the extent to which Internet Banking Services users are satisfied with their experiences. This study will also investigate how other researchers have conducted their research in the past. In order to accomplish the goals of the study project, then, empirical data was gathered from bank clients in the town of Tirupati. According to the findings of the survey, Internet banking in India is still in its infancy and is mostly controlled by Private Indian and international financial institutions. There are just a select few types of customers that utilize banking over the internet. The banks are required to simulate the many hazards that are involved with online banking by using technologically advanced systems and making great use of the technology available to them. In its current state, the regulatory framework has to be modernized in order to address the complexities of online banking and make it more user-friendly. The study also indicated that the majority of people who use Internet Bank services on a regular basis do not typically carry out a large number of transactions, but that these individuals find the service to be highly beneficial for monitoring the status of their accounts. In light of the findings presented in this research, there is a strong consensus among the authors that enhancing the safety of Internet Bank and educating clients about how to make use of the service would unquestionably lead to an increase in the percentage of people using Internet

Verma (2014)[9] evaluated the degree of contentment experienced by clients of Union Bank of India and Yes Bank based on a number of factors that are associated with automated teller machines. For the aim of this investigation, data gathered from bank customers via the use of a survey, and it will then be analyzed through the use of statistical methods and tools such as descriptive statistics, the percentage method, and the ranking method. E-services and the E-banking business are now through a revolutionary stage. The traditional banking system is being phased out in favour of banking based on electronic transactions. The cash economy has given way to the plastic card economy as the dominant trend in banking today. The fierce rivalry that exists between banks, in conjunction with the forces that operate on a worldwide scale, has driven banks to make the technical improvements that are necessary to compete in the electronic age. It is also known as E-banking, internet banking, or online banking, and it offers numerous electronic channels that can be used as alternatives to traditional ways of accessing banking services. Some examples of these channels include internet banking, mobile banking, ATM services, electronic fund transfer, credit cards, debit cards, and electronic clearing services. Counted among these several services. The result would be construed in a manner that is consistent with the view of the respondents as it applies to banking services.

Reddy (2015)[10]highlighted the fact that the development of the banking industry is impacted more than any other group of financial service providers. An increase in the usage of mobile services and the use of the internet as a new distribution channel for banking transactions and international trade necessitates an increase

---

7 Kuchara (2012) "A Study on Customers perception towards Internet Banking at Ahmedabad City" September 2012 ISSN - 2250-199

8 Venugopal (2013)customers' perception on electronic bankinga study on Tirupati area of Andhra Pradesh, India,Journal of management and Social Science,Vol.1(6),pp.62-64

9 Verma (2014),"Non-Performing Assets: A Comparative Study of the Indian Commercial Banks",Non-Performing Assets: A Comparative Study of the Indian Commercial Banks Vol.6(2),pp.6-7

10 Reddy (2015) "A Study on Customer"s Perception and Satisfaction towards Electronic Banking inKhammam District" ISSN: 2319-7668. Volume 1.

in the level of attention directed toward the protection of electronic banking systems from fraudulent activities. The growth and the ongoing advancement that is being experienced in Information and Communication Technology (ICT) have resulted in a great deal of change being brought about in almost all facets of everyday life. E-Banking, also known as Internet Banking and Online Banking, has emerged as the dominant model in the banking sector.

SCOPE OF THE STUDY

The findings of this study are based on the opinions of clients with relation to online banking services. The study investigated the consumers' perspectives on the e-banking services offered by the chosen banks, as well as the characteristics of the e-banking services, including their dependability, responsiveness, and security, ease of use, accessibility, and efficiency.

NEED IN SUPPORT OF THE STUDY

Electronic banking is a vital component of running a company in the modern day and also plays an important role in people' day-to-day lives. The electronic banking system is used for many facets of people's enterprises, such as marketing, banking, trade, and other sorts of entertainment, amongst other things. People are putting an increasing amount of importance on performing their operations in the aforementioned fields via the use of technology tools. Because it enables them to do their business without requiring them to travel, take risks, relocate from place to place, or otherwise cope with an unpleasant atmosphere, they are particularly interested in conducting something known as online banking. Consumers participate in e-banking transactions for the purpose of their own personal financial demands, which are quite frequent in the banking sector and have made e-banking transactions very popular. It is also recognized as e-banking services to a large degree, which are absolutely required in any manner for customers of banks in the present day to utilize in all of their financial activities.

STATEMENT OF THE PROBLEM

In order for the government to realize its objective of bringing about an all-encompassing improvement in the state of the nation as a whole, it is launching a great number of creative new programmes all across the country that are geared specifically toward the communities of the people. E-banking services have started to increase in all over the world over the course of the past few years, and as a direct consequence of this growth, the companies that offer banking services have been compelled to compete with one another in order to survive. As a direct consequence of this, consumers are driven to make use of the many online banking services that are now accessible. From the perspective of financial institutions, it is of the highest necessity to conduct research on the sentiments and levels of happiness held by banking customers. As a result, the purpose of the research is to analyze the customers' points of view about the impression of the services offered by online banks.

OBJECTIVES OF THE STUDY

The objectives of the study are

1. To find out the factors influencing customers' perception towards e-banking service
2. To examine frequent use of the E-Banking Services by the respondents.
3. To study the nature of E-Banking Services Preferred by the respondents

RESEARCH METHODOLOGY

200 respondents were identified for measuring Customer perception towards role of E- Banking services in current scenario using convenient sampling technique. The data from the selected sample respondents have been collected through the Google forms.

The details of the frequent use of the E-Banking Services

The banking sector in India has been a major contributor to the country's rising standard of living and economic progress in recent decades. Self-service banking is becoming more commonplace around the globe, including in India. Customers may now use banking self-services to make deposits, money transfers, pay invoices, and complete other business activities on their own. It does this through improving customer

happiness, boosting awareness, and expanding the quality of service for banking self-services, all of which work together to bridge the gap that exists between depositors and borrowers.

The details of the frequent use of the E-Banking services

Services	N	Percentage
Mobile Recharge	36	18
Payment of Telephone Bill	26	13
Payment of Electric Bill	32	16
Money Transfer	40	20
Railway Ticket Booking	12	6
Air Ticket Booking	16	8
Filing of Tax Return	18	9
Investments	20	10
Total	200	100

The above table shows the results of the inquiry made with the selected respondents for their opinion on the frequency of using the e-banking services of both the banking sectors. Out of the total 200 respondents of banks, 36 respondents (18 per cent) use the e-banking services for mobile recharge and. 26 respondents (13 per cent) use the services for payment of telephone bills. 32 respondents (16 per cent) use the services for payment of electric bills.

The customers' perception towards e-banking service

E-Banking is the banking service using electronic means such as a personal computer (PC), automated teller machine (ATM), mobile phone, etc. to conduct transactions via the Internet. This term is more and more popular for banking users and represents the modern method of banking that replaces gradually traditional one using cash for transactions.

Factors	N	Percentage
Website Design	25	12.5
Reliability	60	30
Security	40	20
Customer Service	42	21
Customer satisfaction	33	16.5
Total	200	100

Electronic banking is the most current in a long line of technological marvels that have emerged in the recent past and include the use of the internet for the purpose of the delivery of goods and services. With the introduction of the World Wide Web, electronic banking has been a driving force in the evolution of the environment. The internet has allowed banks to become a strategic resource that can be used to achieve better levels of productivity. More recently, the E-banking service in India has been carried out in an efficient manner, with the goal of providing very high levels of satisfaction to the consumers of the various banks. The majority of the respondents 60 (30 %) had the view that the reliability was the reason for customers' perception towards e-banking service

Nature of E-Banking Services Preferred and it's ranking

Services	Mean	Std. Deviation	Mean Rank
ATM / Debit card	3.27	1.159	5.43
Credit Card	3.50	1.315	6.00
Broad band internet	3.46	1.168	5.95
Mobile Banking	3.31	1.104	5.58
Online Banking	2.92	1.185	4.54
Tele Banking	2.98	1.447	4.99

Provides efficient services	3.06	1.161	4.88
Provides accurate information	3.26	1.116	5.35
Anywhere banking facilities	3.57	1.132	6.21
Download previous bank transaction history	3.53	1.256	6.08

The above table shows the results of the inquiry made with the selected respondents for their opinion on the nature of the e-banking services preferred by them from the banking sectors. Out of the total 200 respondents of banks,(6.21) anywhere banking facilities were ranked first Download previous bank transaction history (6.08) were ranked second .The result shows that the respondents prefer Credit Card mostly (6.00), Fourthly, the respondents feel Broad band internet (5.95), followed by Mobile Banking (5.58). The result of the significance in the ranking is given below.

Table 3: Friedman Test

N	200
Chi-Square	85.565
Df	9
Sig.	0.000

The Friedman ranking shows that the calculated value of the Chi-Square (85.565) for the degree of freedom 9 is significant at 1% level (p-0.000). It is concluded that E-Banking Services Preferred by the consumers are satisfied.

CONCLUSION

E-Banking, in general, has resulted in a shift away from the conventional patterns of bank operations. These shifts in technology, levels of competition, and patterns of lifestyle all have an effect on the way that banks do their business in the modern period. In point of fact, the client was required to make a personal appearance at the bank branch in order to complete any financial transactions. Clients are able to save both money and time thanks to the advent of electronic banking, which eliminates the need for customers to physically visit a bank branch. Every single financial institution is aware that in order to maintain a healthy customer base, they need to provide their clients some kind of online banking. Because clients using e-banking tend to engage more with the services supplied, banks are able to better maintain their relationships with their customers via the usage of electronic banking. Additionally, it raises the amount of money that banks make, and it makes it simpler for banks to achieve a competitive edge by differentiating their banking services and, as a result, improving their image. The government as well as the banking sector are concerned about concerns related to how customers feel about the growth of e-banking services and how they respond to such advancements. There is a great deal of work that has to be done in order to instil trust in the minds of consumers about the advantages and safety of using e-banking services. There is a pressing requirement for complete contentment with respect to any and all aspects of the nature of e-banking services and the various delivery methods of such services. Customers should be encouraged to use e-banking services to the greatest degree possible by placing a specific focus on the security measures that are in place. Because customers are the firm's most important asset, the success of the banking industry is dependent on them either directly or indirectly. As a result of rapid technological advancement, customers' demands are becoming ever more stringent; as a result, only those businesses that are able to meet those demands more quickly and effectively than their rivals will be able to survive. Skilled workers are required for electronic banking less frequently than for manual banking, and decision-making authority lies with the top management. E-banking is being used by the bank in an effort to provide customers with faster service, and it also assists banks in lowering the costs associated with running their businesses.

REFERENCE

1. Cronin, J. Brady, M. E Hult, G. Assessing the effects of quality, value, and customer satisfaction on consumer behavioral intentions in service environments, Journal of Retailing, Vol.,6 (2), p.193-218,2000
2. Daniel, E., "Provision of Electronic Banking in the UK and the Republic of Ireland," International Journal of Bank Marketing, Vol. 17, No. 2:72-82, 1999

3. Delgado-Ballester, E. and J.L. Munuera-Aleman, "Brand Trust in the Context of Consumer Loyalty," European Journal of Marketing, Vol. 35, No. 11/12:1238- 1258, 2001.

4. De Young, The financial progress of pure-play Internet banks, Bank of International Settlements, Vol.7, pp.80-86, (2001)

5. Devlin J.F. "Customer Knowledge and Choice criteria in retail banking". Journal of Strategic Marketing,: 10: 273-290, 2002

6. Eriksson Kerem and Nilsson "Customer acceptance of internet banking in Estonia". International Journal of Bank Marketing, 2005; 23: 200- 216

7. Frei, Kalakota, Leone and Marx LM. "Process variation as a determinant of bank performance: evidence from the retail banking study". Management Science, 45: 1210-1220,1999

8. Ganesh, C. & Varghese, M. E."Customer Service in Banks: An Empirical Study". Vinimaya, 24(2): 14-26,2003

9. Garland, R. "Estimating customer defection in personal retail banking". The International Journal of Bank Marketing, 20 (7), 317-325, 2002.

10. Gefen, D., "Customer Loyalty in E-Commerce," Journal of the Association for Information Systems, Vol. 3:27-51, 2002.

11. Ali.,Kaynak,Erdener. and Kucukemiroglu, OrsayCredit card development strategies for the youth market: The use of conjoint analysis 'The International Journal of Bank Marketing, Vol.12:6,pp. 30-36, 1994

12. Sathye, 'Adoption of internet banking by Australian consumers: an empirical investigation International Journal of Bank Marketing, Vol.17 (7), 324-334,1999

13. Mols, N. 'The Behavioral Consequences of PC banking', International Journal of Bank Marketing, Vol. 16, No. 5, pp. 195–201,1998

ISBN 920520223-1

9 789205 202235

Princeton Press

Overland Park, Kansas - 66212, USA

Website : www.princetonpress.us

आदिवासी साहित्य, संस्कृती आणि अस्मितेचे प्रतीक

ISSN 2319-6033

१५ जानेवारी ते मार्च २०२३
वर्ष-१६ वे, अंक २ ते ४
किंमत रू. १००/-
पृष्ठे - १०४

फडकी

(मासिक)

मुख्य संपादक -
डॉ. संजय लोहकरे

सहसंपादक -
डॉ. मारूती आढळ डॉ. सोनू लांडे

उप संपादक -
प्रा. रामदास गिळंदे मा. संजय इदे

कार्यकारी संपादक -
प्रा. चिंतामण धिंदळे डॉ. सुनील घनकुटे

प्रसिद्धी -
देवराम आढळ सुनील फलके
पंकज इरनक डॉ. विष्णू बोरसे

संपादक मंडळ -
तुकाराम धांडे कृष्णा साबळे
कैलास धिंदळे देवदत्त चौधरी
अभिजित करवंदे सीता भोजने
मेजर विठ्ठल बांगर रोहिदास डगळे
रोशन जांबू अभिमन्यू दारसिंबे

अक्षरजुळवणी -
सरिता ग्राफिक्स अ‍ॅण्ड प्रिंटर्स,
अमरावती

प्रकाशन स्थळ / पत्र व्यवहार -
संपादक - डॉ. संजय यशवंत लोहकरे
निरगुडेवाडी (विठे) ४२२ ६०४
ता. अकोले, जि.अहमदनगर
संपर्क: ९६५७५४९०७६, ९४०४९७९६८३
ई-मेल : phadki@rediffmail.com

(मासिकातील लेखांशी संपादक सहमत असेलच असे नाही)

सभासद होण्यासाठी आवाहन

वर्गणीचे दर

वार्षिक :- 300रू.
दशवार्षिक :- 2500 रू.
आजिव :- 5000 रू.

संपादकीय पत्त्यावर मनीऑर्डर,
चेक किंवा डिमांड ड्राफ्टने वर्गणी पाठवावी.
'फडकी' (Fadaki) या नावाने चेक / डिमांड ड्राफ्ट असावा.

बँक ट्रान्कसरने वर्गणी भरण्यासाठी तपशील

बँक ऑफ महाराष्ट्र शाखा,
अकोले, जि. अहमदनगर
बचत खात्याचे नाव :- फडकी (Fadaki)
बचत खाते क्र. :- 60307966854
IFSC Code :- MAHB0001641
MICR No. :- 422014502

अनुक्रमणिका

१)	कोकणांची होळी : एक रंगोत्सव, एक लोकोत्सव	–प्राचार्य डॉ. मोतीराम रावजी देशमुख	०५
२)	आदिवासी दुबळांचा होळी उत्सव	–डॉ. सुनील गणपत घनकुटे	१५
३)	होली : कोरकू जनजाति का पंचम दिवसीय पर्व	–रोशन जांबू	२०
४)	चाळीसगाव डांगाणातील होळी	–प्रा. यशवंत ढवळा भांडकोळी	२४
५)	पारधी समाजातील होळी (शिम्गो)	–प्रकाश रामभाऊ चव्हाण	३६
६)	होळी : संत एकनाथ		४०
७)	बंजारा होळी : एक सांस्कृतिक ठेवा	–डॉ. विजय जाधव	४१
८)	आदिवासी संस्कृती आणि परंपरेचा वारसा : होळी	–डॉ. रूपेश कोडीलकर	४५
९)	बंजारा लेंगी (होळी गीत)	–संगीता मसराम	५२
१०)	नांदेड जिल्ह्यातील आदिवासी समाज, संस्कृती आणि होळी उत्सव	–डॉ. बैजनाथ सोपान अनमुलवाड	५३
११)	होळी : संत एकनाथ / संत तुकाराम		५९
१२)	आदिवासी कातकरींचा होळी उत्सव	–प्रा. सुभाष लहू शेलार	६०
१३)	सातपुड्यातील होळी उत्सव	–टी. पी. पावरा	६३
१४)	पूनल सावरी सिमगा पंडूम	–रामचंद्र काटेंगे	६६
१५)	आगरातील होळी	–प्रा. चिंतामण धिंदळे	६९
१६)	गोमंतकातील शिमगा : एक समृद्ध लोकसंचित	–प्रा. विनायक बापट	७६
१७)	ठाकर आदिवासींचा शिमगा	–डॉ. मारूती आढळ, मंगल आढळ	८०
१८)	फागुन	–रोशन जांबू	८५
१९)	डांगची होळी	–प्रा. एकनाथ आहेर	८६
२०)	धनगरांची होळी	–विक्रम उत्तम धायगुडे	९२
२१)	होळी गीते : संकलन	–विजया सोनार	९६
		–मिथून ऐ. पावरा	९७
		–रामगोपाल भिलावेकर	९९
		–कवी देवदत्त चौधरी	१००
		–भोरु श्रावणा भांगरे	१०१
		–कृष्णा उल्हा गांगड	१०१
		–प्रा. डॉ. भगवान जे. साबळे	१०२

कोकणांची होळी : एक रंगोत्सव, एक लोकोत्सव

प्राचार्य डॉ. मोतीराम रावजी देशमुख

नाशिक जिल्ह्याचा पश्चिम भाग हा आदिवासी भाग म्हणून ओळखला जातो. यालाच कोकण किंवा डांग (डांगण) या नावानेही स्थानिक लोक ओळखतात. उत्तर महाराष्ट्रात मोडणाऱ्या या नाशिक जिल्ह्याला ऐतिहासिक आणि पौराणिक महत्त्व आहे. महाराष्ट्रातील प्रमुख ११ आदिवासी जिल्ह्यांपैकी बहुसंख्य आदिवासी लोकवस्ती असलेला नाशिक हा एक महत्त्वपूर्ण जिल्हा आहे. येथील आदिवासींचा गत इतिहास उज्ज्वल परंपक्षरांनी आणि शौर्य गाथांनी भरलेला आहे. ते या भूमीचे मूळ रहिवाशी असल्याने या भूमीवर त्यांची मोठी राज्ये होती. मध्यभारतात गोंडीचे राज्य होते म्हणून हा सर्व प्रदेश गोंडवन या नावाने ओळखला जाई. उत्तर-पश्चिम भारतात भिल्लांची राज्ये होती. भिलवाड या नावाने हा प्रदेश ओळखला जाई. महादेव कोळी जमातीचे जव्हार (ठाणे) हे राज्य, तर कोकणा लोकांचे सुरगाणा (नाशिक), ही राज्ये इतिहासकाळापासून प्रसिद्ध आहेत.

कोकणा समाजाची जव्हार, पेठ, सुरगाणा, धरमपूर व वासदा ही पाच संस्थाने होती. गेल्या हजारो वर्षांपासून कोकणांचे या परिसरात वास्तव्य आहे. त्यांच्या लोककथा, लोकगीते आणि दैवत कथा, गीतांवरून हे स्पष्ट होते.

महाराष्ट्राच्या पश्चिम व उत्तर टोकास सह्याद्री पर्वताच्या उत्तरेकडील सीमा ज्या भागात संपते तो भाग बागलाण म्हणून ओळखला जातो. हा कोकणा आणि भिल्लांचा प्रदेश म्हणून ओळखला जातो. बागलाण मध्ये कोकणा आदिवासी मोठ्या संख्येने राहतात. या परिसरात धोडप, तिळवण, साल्हेर, मुल्हेर, हतगड इत्यादी डोंगरी किल्ले आहेत. त्र्यंबकेश्वर पासून ते बागलाण प्रांतापर्यंत छोटे-मोठे एकूण ६३ किल्ले असून त्यांच्या आश्रयाने पूर्वी पासून कोकणा लोक राहात आले आहेत.

पेठ, त्र्यंबकेश्वर तालुक्यातील वाघेरा किल्ला, खैराय किल्ला हे किल्ले आहेत. पेठ, सुरगाणा येथे आदिवासी लोकांचे स्वतंत्र राज्य होते. पेठ येथे भगवंतराव देशमुख हे राजे होते, तर सुरगाणा संस्थानाचे धैर्यशील पवार हे राजे होते.

नाशिक जिल्ह्यातील कोकणा, भिल्ल, ठाकर, महादेव कोळी, कातकरी या प्रमुख आदिवासी जमातींपैकी कोकणा ही जिल्ह्यातील प्रमुख आदिवासी जमात आहे. नागर भागापासून दूर अंतरावर त्यांचे वास्तव्य असून शेती हा त्यांचा मुख्य व्यवसाय आहे.

संपूर्ण मानवी इतिहासात माणसाच्या संस्कृतीला आकार देण्याचे काम धर्म आणि त्यानुसार येणाऱ्या धार्मिक श्रध्दा, कर्मकांड, रुढी, परंपरा, प्रथा यामुळे झाले आहे. धार्मिक मूल्ये, श्रध्दा, नीती, कर्मकांड, सणवार, उत्सव, अद्भुत शक्ती, सामर्थ्यवाद, निसर्गवाद हे सर्व धर्माचे आणि पर्यायाने संस्कृतीचे महत्त्वाचे घटक आहेत.

आजच्या या धावपळीच्या जगात माणसांचे एकत्र येणे ही गोष्ट दिवसेंदिवस कठीण होत चालली आहे. अलीकडे तर विभक्त कुटुंब पद्धतीमुळे केवळ सणाच्या निमित्तानेच एकत्र येण्याचा योग येतो. धावपळीमुळे जीवनातील आनंद कमी होत आहे. किमान सणाच्या निमित्ताने काही दिवस निर्दोष सुखोपभोगात घालण्याची संधी मिळते.

आदिवासींच्या सण-उत्सावांमध्ये एक प्रकारचा मनमोकळेपणा जाणवतो. भारतातील सर्व

 ISSN- 2319-6033 फडकी

आदिवासींच्या संस्कृतीमधील एक विशेष गोष्ट म्हणजे, आदिवासी स्त्री-पुरुष सारखे नाचत असतात, गात असतात. आदिवासींनी ह्या कला हजारो वर्षांपासून जतन केलेल्या आहेत. आदिवासींचे सण-उत्सव हे मुख्यत: दोन प्रकारचे असतात. एक ऋतुनुसार (प्रत्येक ऋतूत साजरा केला जाणारा) व दुसरा धार्मिक देवदेवतांना प्रसन्न करणे व निसर्गाला संतुष्ट करणे. निसर्ग हा आदिवासींचा सर्वेसर्वा आहे. निसर्गाचे त्याच्यावर अनंत उपकार आहेत. ते उपकार फेडून त्याला संतुष्ट करुन घेण्याच्या कल्पनेतूनच तो निसर्गपूजक बनला असावा.

इतर काही आदिवासी जमातींप्रमाणेच कोकणा आदिवासींच्या जीवनात कष्टाला सर्वाधिक महत्त्व असते. टिचभर पोटासाठी दिवसरात्र ढोरमेहनत करणाऱ्या या आदिवासींच्या शरीराला केवळ सण, उत्सवाच्या निमित्तानेच विश्रांती मिळते. एरव्ही अर्धपोटी राहणाऱ्या कोकणांना या निमित्ताने गोडधोड आणि पोटभर खायला मिळते आणि मनसोक्त मोहाची दारुही प्यायला मिळते. आधीच आनंदी असलेल्या कोकणांचा आनंद सण-उत्सवाप्रसंगी होणाऱ्या नाच-गाण्यांमुळे द्विगुणीत होतो. सणाच्या निमित्ताने दिवसा किंवा रात्री नाचगाण्याचा कार्यक्रम हमखास असतो. गावातील मध्यवर्ती ठिकाण किंवा पटांगणात दणाणनारा ढोल, घुंगुरकाठी, टारपीचा आवाज, संबळ, ताशाचा कडकडाट कानावर पडला रे पडला की, थरथरणारे पाय त्या दिशेने वळतात. काही वेळातच तो तालबद्ध फेराच्या नादात धुंद होऊन जातो. संपूर्ण परिसर नाचगाण्यांच्या आवाजाने अक्षरशः दणानूण जातो.

होरी, होळी पौर्णिमा, हुताशनी, शिमगा, शिमगा होलोत्सव अशा विविध नावांनी भारतभर साजरा होणारा 'होळी' हा एकमेव सण आहे. कोकणा आदिवासींच्या जीवनात या सणाला खूपच महत्त्व आहे. पुरणाच्या पोळ्या, रंगाची उधळण, नाचगाण्याचा जल्लोष, डफ, ढोल, टिपऱ्या, खंजिरी, घुंगूरकाठी, टारपीचे ध्वनी अशा काही आनंदोत्सवी मनाला प्रसन्न करणाऱ्या बाबी आहेत. चोरलेली लाकडे, गोवऱ्या, ती गोळा करताना दारोदार मारलेली बोंब, धुळवडीत अंगाला चिखल माखून घातलेला धुडगूस आणि या सर्वांचा अविभाज्य भाग म्हणजे कोणाच्या तरी नावाने ठोकलेली बोंब आणि उच्चारलेल्या अर्वाच्य, अश्लील शिव्या. हा सर्व आज ओंगळ वाटणारा भागही कोकणांच्या पारंपरिक होळी सणाचा अविभाज्य भाग आहे. केवळ ग्रामीण, अशिक्षित आणि आदिवासी लोकांमध्येच अशा ओंगळ पध्दतीने हा सण साजरा केला जातो असे नाही, तर समाजाच्या अगदी उच्च स्थरावरही काही वर्षांपूर्वीपर्यंत या सगळ्या ओंगळवाण्या प्रकारासह हा सण उत्साहाने साजरा होत असे. आजही थोड्याफार प्रमाणात त्याचे अवशेष रेंगाळताना आढळतात.

भारतीय सौरवर्षाच्या फाल्गुन महिन्याच्या शुक्ल पौर्णिमेस होळी सण येतो. होळी हा अतिप्राचीन-सण असून प्राचीन काळी तो 'सुफलनाचा' एक विधी म्हणून साजरा केला जात असावा. पुढे 'लोकोत्सव' म्हणून रूढ झाला असावा आणि नंतर त्याचे रूपांतर 'सणात' झाले असावे. आजमीतीला हा सण संपूर्ण महाराष्ट्रात साजरा केला जातो. आदिवासी संस्कृती ही कृषिसंस्कृती आहे. कृषी आणि होळी यांचा संबंध प्राचीन काळापासून आहे. या सुफलतेच्या सणाविषयी लोकसाहित्याचे अभ्यासक डॉ. साहेब खंदारे म्हणतात, "प्राचीन काळी फाल्गुन पौर्णिमेला सुरू होणारा होळीचा उत्सव पंधरा दिवस चालत असे. होळीच्या दिवशी हे फाल्गुनी नक्षत्र येते. या नक्षत्राची 'भग' ही देवता आहे. 'भग' या शब्दाचा रूढ अर्थ 'स्त्री जननेंद्रीय' असा होतो. भग देवतेच्या नावानं बोंब ठोकणं हा अनार्यांचा पूजेचाच प्रकार होता. हा पूजा प्रकार सुफलनासाठी करण्यात येणारा विधी होता."

होळी सणाबद्दल पद्मपुराणात आलेली आख्यायिका अशी, ''धुंडा नावाची राक्षशीण सर्वत्र हैदोस घालू लागली. तिच्या त्रासाने त्रस्त झालेले लोक वसिष्ठ ऋषीकडे गेले. तिच्या त्रासापासून मुक्त करण्याची विनंती करू लागले. तेव्हा वसिष्ठांनी त्यांना एक युक्ती सांगितली. त्या राक्षशीणीचा एक पुतळा करून फाल्गुन पौर्णिमेला गवऱ्यांची, लाकडांची आरास करून त्यावर तो पुतळा ठेऊन तिचा अग्निसंस्कार करा आणि त्या जाळाभोवती शिव्या देत बोंबा मारा. याप्रमाणे लोकांनी धुंडा राक्षशीणीची होळी केली. तेव्हापासून होळीचा सण सुरू झाला.''

विष्णुपुराणातील होळीच्या संदर्भातील हिरण्यकश्यपू आणि त्याचा विष्णुभक्त मुलगा प्रल्हाद याची आख्यायिका सर्वज्ञात आहे. अशा प्रकारच्या अनेक आख्यायिका, दंतकथा कोकणा जमातीत ऐकायला मिळतात, मात्र होळी हा सण खऱ्या अर्थाने भूमीच्या संदर्भात येणारा सुफलन विधी आहे. याला आदिवासींच्या लोकजीवनात बरेच आधार आहेत.

बंगालमध्ये होलोत्सव, उत्तरेत होरी, महाराष्ट्रात शिमगा अशा वेगवेगळ्या नावांनी हा सण ओळखला जातो. कोकणा जमातीत होळी सणाला अनन्यसाधारण महत्त्व आहे. कोकणांच्या जीवनातील हा सर्वात मोठा आनंदाचा सण. यावेळी शेतातील सारी कामे संपलेली असतात. खळ्यावरील धान्य घरी आलेले असते. त्यामुळे शेतकरी वर्ग आनंदी असतो.

उत्सवप्रिय कोकणांच्या जीवनात होळी या धार्मिक सणाला सर्वाधिक महत्त्व आहे. होळी सण जवळ येताच सर्व स्थलांतरित शेतमजूर, सासुरवाशीण मुली परततात. त्यामुळे स्थलातरांमुळे ओस पडलेली गावे, खेडी पुन्हा गजबजून जातात.

या दरम्यान हिवाळा संपून वसंत ऋतूचे आगमन झाल्याने निसर्गात एक नवचैतन्याचे वातावरण असते. रंगात रंगलेला रंगोत्सव, वसंतोत्सव आणि पर्यायाने मदनोत्सव आणि मदनोत्सव म्हटला की श्रृंगार आलाच. होळी सणानिमित्ताने आदिवासी कोकणा भागात भरणाऱ्या बाजाराला 'भूरकुंड्या बाजार' असे म्हणतात.

होळी सणाच्या आठ दिवस आधीपासून कपडे, गृहोपयोगी साहित्य, नारळ, हारडे, डाळ्या, खोबरं, किराणा खरेदी करण्यासाठी लोकांची धावपळ सुरू असते. गावोगावी भरणारे 'आठवडे बाजार' लोकांनी अगदी फुलून गेलेले असतात. होळी निमित्ताने सुरगाणा, बाऱ्हे, पेठ, ठाणापाडा, घोटी, सिध्देश्वर (कळवण) आदी अनेक ठिकाणी स्थानिक देवतांच्या नावाने 'यात्रा' भरते. या यात्रांमध्ये अबालवृद्ध, स्त्री-पुरुषांची एकच गर्दी असते. या गर्दीत तरुण वर्गाचा अधिक भरणा असतो. या यात्रा, बाजारांमधून मोठ्या प्रमाणात उलाढाल होते. यात्रा जेथे भरते तेथे अजूनही या निमित्ताने 'कुस्त्यांचा फड' भरतो. पंचक्रोशीतील कुस्तीगीर आवर्जून याप्रसंगी उपस्थित असतात.

कोरकू, वारली, कोळी, पावरा, भिल्ल या जमातींप्रमाणेच कोकणा जमातीतही आदल्या दिवसी अविवाहित मुले होळी पेटवतात. ती आकाराने लहान असल्याने ते तिला 'लहान होळी' म्हणतात. रात्रभर त्याभोवती नाचगाण्यांचा कार्यक्रम सुरू असतो.

दुसरा दिवस फाल्गुनी पौर्णिमा म्हणजे 'मोठी होळी.' होळीसाठी लागणारी फाफरं (लाकूड) प्रत्येकजण आपले कर्तव्य समजून घेऊन येतो. प्रत्येक घरचे एक 'फाफर' असावे असा कोकणांमध्ये दंडक

आढळतो. होळीसाठी लागणारा 'बांबूचा खांब' घेण्यासाठी गावकरी जेथे मिळेल तेथे जातात. तो विधिपूर्वक तोडलेला खांब ते सवाद्य होळीवर घेऊन येतात.

पूर्वापार नियोजित होळीच्या जागी खड्डा खोदला जातो. खड्डा, होळी खांबाची; हळद, कुंकू, अक्षदा, पाणी, रुपया, सुपारी यांनी विधिवत पूजा केली जाते. सर्व गावकरी होळीवर जमा झाले की तोरण, हार, हारडा, खोबऱ्याच्या वाट्या, पापड्या बांधलेला होळीखांब गावकरी सवाद्य, गगनभेदी बोंबा मारत उभा करतात. पोलीस पाटील किंवा गावातील कारभाऱ्याच्या शुभहस्ते होळीचे पूजन आटोपल्यानंतर सर्व गावकरी होळीभोवती पाच फेऱ्या पूर्ण करतात. होळीला नैवेद्य, पाणी वाहण्यात येते. 'होळी बाय होळी बाय बनायसो' या गगनभेदी ललकारीत ढोलाच्या ठेक्यावर होळीला अग्नी दिला जातो. होळीने पेट घेतल्यानंतर ज्या गावकऱ्यांनी होळीला 'नवस' घेतला असेल ते नवस फेडतात. यावेळी होळीत नारळ, खोबऱ्याची वाटी, कोंबडे टाकण्याची प्रथा कोकणा जमातीत आढळते. होळी खांबावरून पडलेली 'पापडी' आणि खांबाचा 'भंडारा' पदराला बांधून लहानथोर गावकरी मंडळी एकमेकांची उरभेट घेऊन पाय धरते. वीरांना नमस्कार करून मंडळी आपापल्या घराकडे परतते. होळीपासून पुढील पाच दिवस होळी जागविण्याची प्रथा कोकणा जमातीत आढळते. रात्रीच्या जेवनानंतर पुरुष मंडळी जागरणासाठी होळीवर येते. रात्री नाचगाण्याचा कार्यक्रम असतो. पाच दिवसापर्यंत होळी विझणार नाही अशी दक्षता ते घेतात.

दुसऱ्या दिवसी 'धुळवड.' या दिवशी अबालवृध्द स्त्री-पुरूष माती, राख आणि पाण्याने अक्षरशः माखून आणि न्हावून निघतात. वाटेने येणाऱ्या, जाणाऱ्या वाटसरूला अडवून त्यांच्याकडून 'फाग' मागतात. सलग चार दिवस हा उद्योग सुरू असतो. पाचव्या दिवशी 'रंगपंचमी.' या दिवशी भेंडी, पळस, सावर, पांगारा या झाडांच्या फुलांपासून तयार केलेला रंग आणि बांबूपासून तयार केलेली पिचकारी यांनी रंग खेळतात. हातात रंगाच्या पिचकाऱ्या आणि मुखात होळी गीते, सणाचा चेहऱ्यावरून ओसंडून वाहणारा आनंद असे नाविण्यपूर्ण वातावरण सर्वत्र बघायला मिळते.

देशात आणि महाराष्ट्रातील बहुतेक आदिवासी जमातीत होळी जवळ जवळ आठवडाभर चांगलीच नाचून, गाऊन, रंगात रंगून, बेधूंद होऊन खेळली जाते. होळीच्या वेळी अश्लील शिव्या आणि अर्वाच्य शब्दोच्चार सर्रासपणे वापरले जातात. हा प्रसंग ओंगाळवाणा वाटत असला तरी ते आदिवासी लोकजीवनाचे एक अविभाज्य अंग आहे.

होळीच्या बाबतीत सांगितली जाणारी पुराणकथा, दंतकथा खरी की खोटी हा प्रश्न महत्वाचा नसून महत्वाचे आहे ते या कथांमधून आपणापर्यंत येऊन पोहचणारे सार. 'जगात अत्याचार, पापाचा पराभव होतो. ते जळून जातात आणि सत्य तेवढे टिकते. थंडीचा नायनाट होतो.' हे या कथेचे सार आहे. अर्थात पाप जाळून टाकायचे आणि सत्याचे रक्षण करायचे हा होळी मागील हेतू जाणवतो. या सणामुळे कोकणांची खेळाडूवृत्ती, गंमती स्वभाव, स्वच्छंदी जीवन यांसह अबालवृध्द स्त्री-पुरूषांतील एकोपा, त्यांचे एकमेकांवर असलेले प्रेम आणि विश्वास यांचे अनोखे

 ISSN- 2319-6033 फडकी

दर्शन यातून घडते. त्यांच्या रीतिभाती, परंपरा, श्रध्दांचे, पर्यायाने लोकसंस्कृतीचे दर्शन घडते. त्यांच्या नृत्यगाण कलेचा आविष्कार यातून प्रत्ययास येतो.

झाडा-झुडपांवर फुटणारे कोंब, कळ्या फुटत असण्याचा काळ म्हणजे पुन्हा नवनिर्मितीची चाहूल असते. अशा वेळी सुफलीकरणविधी लाभदायक ठरणार. आदिमानवाची श्रध्दा या अश्लिलोच्चाराच्या आणि होळी दहणाच्या मुळाशी आहे. अग्नीच्या साक्षीने होणारा तो सुफलीकरणविधीच आहे.

शिमगा-होळी हा कोकणा आदिवासींचा एक महत्त्वपूर्ण सण, फाल्गुन शुध्द नवमीपासून बहुधा होळी उत्सव कोकणात सुरू होतो. पौर्णिमेला मोठी होळी असते. यावेळी दररोज नृत्य, गाण्याचा कार्यक्रम असतो. त्यामुळे दिवसेंदिवस नृत्यगीत वाद्यांचा बहर वाढतच जातो. जवळ जवळ ५ ते ६ दिवस चालणाऱ्या या सणाला उत्सवाचे स्वरूप प्राप्त होते. कोकणांचा प्रमुख व्यवसाय शेती हा आहे. त्यांची बहुतांशी शेती ही डोंगर उताराला आहे. पर्यायी पाण्याची सोय नसल्याने ती वरच्या पावसावरच अवलंबून असते. कधी अतिवृष्टी तर कधी पावसाचा लहरीपणा यामुळे पीक वाया जाते. वर्षभर पुरेल एवढे धान्य पुष्कळदा हाती लागत नाही. शेतीची कामे संपल्यानंतर माहे डिसेंबर पासून स्थानिक पातळीवर कुठल्याच प्रकारचे काम नसते, त्यामुळे भूमिहीन, अल्पभूधारकांना रोजगाराच्या शोधार्थ अन्यत्र स्थलांतर करावे लागते. घरी म्हातारी माणसे, स्त्रिया, जनावरं सोडून कर्ती माणसे मुलाबाळांसह स्थलांतर करतात. त्यामुळे काही गावे तर अगदी ओस पडलेली बघायला मिळतात.

'होळी' हा धार्मिक महत्त्व असलेला कोकणा जमातीचा सर्वात महत्त्वाचा आणि मोठा सण. रोजगाराचे शोधार्थ बाहेरगावी स्थलांतरित झालेली मंडळी सणानिमित्ताने गावाकडे परतल्याने ओस पडलेली खेडी पुन्हा गजबजू लागतात. हाताला कामधंदा मिळाल्याने दोन पैसे गाठीला असतात. त्यामुळे सगळेच खुशीत असतात.

कोकणा जमातीत मोठ्या होळीच्या आदल्या दिवशी 'लहान होळी' साजरी करण्याची प्रथा आहे. गावातील तरुण पोरं एकत्र येऊन सायंकाळी एरंडाचा सोट, बांबू, गोवऱ्या यापासून होळी तयार करतात. आकाराने लहान असलेली ही होळी पेटवून तिच्या भोवती नाचगाणी करतात. विविध प्रकारचे खेळ खेळतात. रात्रभर नाचगाणी चालू असतात.

दुसऱ्या दिवशी 'मोठी होळी.' परंपरागत होळी दहनाच्या ठिकाणी सायंकाळी सर्व लहानथोर स्त्री-पुरुष जमा होतात. होळीची पूजा होते. तोरण, पापड्या, खोबरे वाट्या बांधलेला खांब, बोंबा मारत उचलला जातो. ढोलकरी ढोल वाजवत असतो. बोंबा मारणाऱ्यांची जणू स्पर्धाच सुरू असते. विशेषतः पौर्णिमेचा चंद्र उगवल्यानंतर पाटलाच्या शुभहस्ते होळी पेटविण्यात येते. त्याआधी होळीचं नमन गीत गात होळी भोवती पाच फेऱ्या पूर्ण केल्या जातात. या वेळी पापडा झेलण्यासाठी गावकऱ्यांची एकच धांदल सुरू होते.

होळीवर गावातील जवळजवळ सर्वच लहानथोर ग्रामस्थ जमलेले असतात. तरुण हौसी पोरे वर्षभर मनात साचलेली भावनांची जळमटे काढायची आणि खळमळ धुवायची नामी संधीच समजून बोंबा मारतात. एकमेकांना शिव्या देतात. या शिव्या विशेषतः अश्लीलच असतात. पण विशेष म्हणजे कुणालाच त्याचा राग येत नाही. देता येतील तेवढ्या शिव्या द्यायच्या, बोंबा मारायच्या हा जणू काही धार्मिक विधीचाच भाग समजून कोकणा तो हसतखेळत पार पाडत असतो.

या संदर्भात लोकसाहित्याच्या अभ्यासिका तारा भवाळकर लिहितात, "सृष्टीचक्रातील प्रत्येक बदलत्या ऋतुमागे निर्मितीचे धुमारे प्रत्यक्षाप्रत्यक्ष असतातच. फाल्गुनातला सरता शिशीर पुढे येऊ घातलेल्या

ISSN- 2319-6033 फडकी

वसंताचा अग्रदूत असतो. झाडावेलींवरची जुनी पाने झडून नवी कोवळी पालवी आलेली असते. फुलू पाहणाऱ्या वसंताची चाहूल झाडांना मोहर देत असतो. शतरंगी फुलांच्या आगमनाची वर्दी देणाऱ्या कळ्यांचे कोंब झाडाझाडांवर फुटत असण्याचा हा काळ म्हणजे निर्मितीची चाहूल असते. अशा वेळी सुफलीकरणविधी लाभदायक ठरणार ही आदिमानवाची श्रध्दा या अशा अश्लीलोच्याराच्या व होळी दहनाच्या मुळाशी आहे." भवाळकर यांनी होळी सणामागील मुख्य हेतू यातून मांडला आहे.

मोठ्या होळीच्या दिवशी रात्रभर संबळ, ढोलकी, ढोल या तालावर नाचगाण्याचा कार्यक्रम सुरू असतो. गमती तरुण कधी स्त्री गणवेश घालून, तर कधी रंगीत संगीत, नक्षीदार पण विचित्र गणवेश परिधान करून चेहरा, अंगाला रंग लावून विविध प्रकारची सोंगे आणून नाचतात. दारुच्या धुंदीत बेहोश होऊन नाचगाणे करणाऱ्या या तरुणांना पहाट कधी झाली हे कळतच नाही. काही कोकणा तरुण ढोलनृत्य करून रात्र जागून काढतात.

दुसऱ्या दिवशी 'धूळवाडा' असतो. कोकणा जमातीत धूळवाडा मोठ्या जोशात साजरा होतो. लहान मुले, तरुण रस्ता अडवून येणाऱ्या जाणाऱ्यांकडून राख, धूळ, पाण्याचा धाक दाखवून पैसे मागतात. यालाच ते 'फाग' किंवा 'फोस' असे म्हणतात. कोकणा स्त्री-पुरुष मुक्तपणे धूळवाड्यात सहभागी होतात. सकाळपासून सायंकाळपर्यंत एकमेकांना भिजविण्याची एकच धांदल सुरू असते. पळापळ, आरडाओरडाने संपूर्ण परिसर गजबजून जातो.

लहान होळी, मोठी होळी आणि पुढे रंगपंचमीपर्यंत दररोज रात्रभर संबळ, ढोल, ढोलकी, टारपी या वाद्यांच्या संगतीने नाचगाण्याचा कार्यक्रम सुरू असतो. याप्रसंगी वेगवेगळी सोंगेही नाचविली जातात. शिकारनृत्य, खापऱ्याचोर, चारणीन, जमीनदार, सावकार, पुढारी, वाणी दुकानदार इ. प्रकारची विनोदी सोंगे, नकला सादर केल्या जातात. त्याला संगीताची साथ असते. हा सगळा कार्यक्रम उत्स्फूर्त असतो. त्यामुळे त्यात जिवंतपणा जाणवतो. संगीत, नृत्य, मजेशीर विनोदी संवाद, सोंग यातून कोकणी कलेचा अनोखा नृत्यनाट्य आविष्कार घडतो. गावाच्या एकतेचे दर्शन यातून घडते. शिवाय रंगपंचमीत गावातील लहानथोर स्त्री-पुरुष मुक्तपणे सहभागी होत असल्याने कोकणांची होळी ही एक रंगोत्सव बनते. ती एक लोकोत्सव ठरते.

होळी सणाच्या दुसऱ्या दिवसापासून म्हणजे धुळवाड्यापासून कोकणा परिसरात वेगवेगळ्या प्रकारचे नाच केले जातात. त्यापैकीच 'मादोळ नाच' हा एक आहे. या नृत्यपथकात लहानमोठी हौशी पोरं एकत्र येऊन सोंग घेऊन गावोगावी फिरतात. ४ ते ८ जनांचे हे पथक असते. कलाकार तरुणाने स्त्री वेश धारण केलेला असतो. कमरेला चामडी घुंगरपट्टा, हातात तलवार, अंगावर दागदागिने, डोक्याला फेटा अशा पध्दतीने त्याला सजविलेले असते. काही वाद्ये वाजवणारे वादक असतात. काही पोलिसांचा वेश करतात. एक दोन तरुण अंगाला राख, रंग लावून चित्रविचित्र पध्दतीने सजलेले असतात.

या निमित्ताने काही तरुण कलाकार अंगात गोणपाट अथवा घोंगडीचा सदरा घालून शक्यतो जुनी पुराणी काळी पॅन्ट घालतो. कमरेला बैलांच्या गळ्यातील घुंगूरपट्टा, तर पायाला चाळ बांधतात. चेहरा, हातापायांना रंग फासून ढोलकी, मादळ, बासरी, झांजरी या वाद्यांच्या साथीवर हा तरून 'डगीचा नाच' करून, वाकुल्या दाखवून, चित्रविचित्र हालचाली करून गावकऱ्यांचे मनोरंजन करत असतो. इतर २ ते ३ तरुणही त्याच्या साथीने सजलेले असतात. यालाच ते 'पेरण' असे म्हणतात.

वेगवेगळी सोंगे घेतलेले हे तरुण एक गाव झाले

की दुसऱ्या गावात जातात. काही तरुण टारपी, घुंगूरकाठी घेऊन घराघरासमोर जाऊन टारपी नाच करून लोकांचे मनोरंजन करतात. सजविलेली टारपी, पारंपरिक गणवेश, हातात घुंगुरकाठी घेतलेले हे तरुण दिवसभर गावोगावी फिरत असतात.

काही तरुण पोरं डोक्याला बांधलेल्या रुमालात मोरपीस खोचून, हातात 'खटखुबा' घेऊन गावोगावी फिरतात. खास मेणापासून तयार केलेल्या शंकू कृती आकारावर मोरपीस रोवलेले असते. यालाच ते खटखुबा असे म्हणतात. गावातील प्रत्येक घरापुढे जाऊन 'आजे आजे खटखुबा' असे म्हणत घरातील माणसांना आश्चर्याचा धक्का देऊन जातात. इतर हौशी मुले रंगाने रंगलेली असतात. गमतीशीर विनोद करत ही मुले घरोघरी फिरतात. नागली, तांदूळ, पैसे या स्वरुपात त्यांना दक्षणा दिली जाते. दक्षणा पदरात पडताच ते पुढील घरी जातात.

नाचणाऱ्या या टोळ्या गावोगावी प्रत्येक घरासमोर थांबून नाचत असतात. कमीत कमी पाच होळ्या म्हणजेच 'पाच गाव' फिरावेत अशी त्यांच्यात प्रथा आढळते. ही बहुतेक सर्व विनोदी कलाकार मंडळी असते.

खुसखुशीत संवाद, शारीरिक हालचाली, गमतीशीर पेहराव, सोंग, संगीत, नाच, गाणे, अभिनय यांच्या सुंदर मिलनातून नृत्यनाट्यगान कलेचा आविष्कार घडतो. त्यांचे कलागुण, लोकजीवन, त्यांच्या प्रथा, परंपरा, श्रध्दा तसेच त्यांची लोकसंस्कृती, त्यांच्यातील सामूहिक एकता यांचे दर्शन यातून घडते.

फाल्गुन महिन्यात पौर्णिमेला येणारी 'होळी' हा कोकणा आदिवासींचा सर्वात महत्त्वाचा व मोठ्या आनंदाचा सण. आदल्या दिवशी 'कुकूड होळी' तर दुसऱ्या दिवशी 'मोठी होळी' ते साजरी करतात. प्रत्येक घरचे लाकूड त्यासाठी होळीवर येते याला ते 'फाफर' असे म्हणतात. गावचा 'मानकरी' खांबाची विधीपूर्वक पूजा करून तोरण बांधतो. घराघरातून आलेल्या पापड्या, वाट्या बांधल्या जातात. चंद्राच्या साक्षीने गावकरी होळीभोवती पाच फेऱ्या पूर्ण करून 'मानकरी' होळी पेटवितो. सर्व गावकरी मनोभावे होळीचे दर्शन घेतात. होळी पेटवण्याआधी नमनगीत म्हटले जाते. ते पुढीलप्रमाणे,

'होळे बाय होळे बाय बनायसो ।धृ।
पलां तोरण चढा यसोऽ
होळे बाय होळे बाय बनायो डख पयली पापडी
चडायसो ऽ
होळे बाय होळे बाय बनायसो ऽ।।
पयला फापर चडायसो ऽ होळे ऽ होळे ऽऽ होळे ऽऽ।'

या 'नमनगीताला' त्यांच्या जीवनात मंत्राचा दर्जा आहे. सर्वजण मिळून ते गातात. होळीला निवद-पाणी दिले जाते. या गीतातून त्यांची धार्मिक वृत्ती,

होळीवरील श्रध्दा दिसून येते. एकात्मतेचे दर्शन घडते. मोठी होळी पेटविल्यानंतर रात्रभर नाचगाण्यांचा कार्यक्रम चालतो. याप्रसंगी म्हटली जाणारी काही नमुनेदार लोकगीते पुढीलप्रमाणे,

'होळे बाय होळे व सदा शिमगा खेळी वं ।धृ।
होळे माय होळे माय, इडा पिडा घेऊन जाय।।'

वरील 'नमन' गीताप्रमाणेच या गीताला देखील कोकणा जमातीत मंत्राचा दर्जा आहे.

फाल्गुन महिन्यातील पौर्णिमेला चंद्रोदयानंतर कारभाऱ्याच्या शुभहस्ते पूजा करून होळी पेटविली जाते. या पूजेच्या वेळी ज्या ज्या साहित्याने पूजा केली जाते त्या सर्व सिनगारांचा उल्लेख ज्या गीतातून येतो. ते प्रश्नोत्तर स्वरुपाचे होळीगीत पुढीलप्रमाणे,

'होळे बाय तुलं सिनगार केला कशेचा व
कशेचा?।।धृ।।
होळे बायलं सिनगार केला तोरणाचा रे तोरणाचा।
होळे बायलं सिनगार केला शेंदराचा रे शेंदराचा।।
होळे बायलं सिनगार केला कुक्वाचा रे कुक्वाचा।'

रात्र जसजसी वाढत जाते तसतसा नाचगाण्यात अधिक रंग भरत जातो. तरुण-तरुणी बेधुंद होवून नाचत-गात असतात. अशावेळी रंगीत तरुणींचे रसभरीत वर्णन ज्या कोकणा लोकगीतातून येते ते लोकगीत पुढीलप्रमाणे.

'लाल परिलाल बैरागी लालें ।धृ।
हातात बांगड्या लालेलालऽ
हातात रूमाल लालेलालऽ
हातात येळा नखरेदारऽ
गळ्यात मिथला रंगीतदारऽ
नाकात नथनी नखरेदारऽ'

या गीतातून कोकणांच्या अलंकारांचा परिचय होत असतानाच ऐन तारुण्याच्या भरात आलेल्या मादक तरुणीचे रसभरीत वर्णन या गीतातून आलेले आहे.

मोठ्या होळीच्या दुसऱ्या दिवसापासून ते रंगपंचमीपर्यंत गावोगावी हिंडून 'फाग' मागण्याची प्रथा जमातीत प्रचलित आहे. त्यासाठी नडगीचा नाच, मादळ, पेरणं, खटखुबा, भोकला अशा वेगवेगळ्या प्रकारचे नृत्यनाट्य घेवून हौशी तरुणांचे तांडे सकाळपासून सायंकाळपर्यंत गावोगावी हिंडत असतात. अशा वेळी 'नडगीचा नाच' म्हणजेच 'अस्वलाचा नाच' करते वेळी पुढील गीत म्हटले जाते,

'नडगीचा नाच देखो रे भलो ।धृ।
झावलं की झिंगी। भूई उपटून खाय।।
नडगीचे रानात जाईन, नडगीलं बांगड्या भरीन रं।'

हे वरील विनोदी लोकगीत आहे. मोठ्या आकाराची ढोलगी, खंजीर आणि चित्रविचित्र रंगीबेरंगी कपडे घालून पायात चाळ, कमरेला बैलांच्या गळ्यातील घुंगूरपट्टा बांधलेला नाच्या पोऱ्या चित्रविचित्र हातवारे, हावभाव करीत गावकऱ्यांना हसविण्याचे काम करतो. याला साथ असते ती गाण्याची. यालाच कोकणा 'मादळ' असे म्हणतात. या नाचाप्रसंगी म्हटले जाणारे नमुनेदार गीत पुढीलप्रमाणे,

'आठखंड काशी, नवखंड पूरथमी
नवखंड पूरथमी, दैतांनी राज कराय घितला,
नवलाख देवं जमलं, तेही इचार मग केला, समंदेंनी
शपथ घेतली।
दैताचा राज्य, मोडून टाकायचा इचार केला,
मायंदळ हाणामारी झाली। राज्य उलटून टाकला।।
मांजा सुकी झाला, येवढा काम येका भोवानीनं
केला।।'

हे पौराणिक लोकगीत आहे. विस्ताराने मोठ्या असलेल्या या गीतातून बाळाचा जन्म, प्राचीन काळी उन्मत झालेले दैत्य व त्यांचे राज्य उलथून टाकण्यासाठी सर्व देवांनी 'देवी सप्तश्रृंगीवर' टाकलेली जबाबदारी. दैत्यांच्या नायनाटाने सुखी झालेला मानव याचे वर्णन या वरील कोकणा लोकगीतातून आपल्या समोर येते.

ISSN- 2319-6033 फडकी

कोकणा जमातीत प्रचलित असलेले दुसरे एक नमुनेदार मादळ लोकगीत पुढीलप्रमाणे,

'राम का देव वं। सीता का माय वं।।
रागा भरू नको राणी। दारी मांडव भरला।।
रामाचे महालालं देवाची दारका भरली।।
मादळी मधे उभे मादळ घालाय।।
धरती शपत मांडला खेळ, आखे देवांचा जमला मेळ।।
सोयरा धायरा रंगनी येरे, देवांचे अंगणी हजेरी देरे।।
देवाचा भाया, गावाचा नाईक, गावच्या आयाबयणी, गावचा पाटीलें
देवाचे रंगनी, भंडारा उडलं।।'

हे पौराणिक लोकगीत आहे. या निमित्ताने एखादा हौसी तरुण पायात चाळ बांधून चोळी, लुगडं हा स्त्री वेश धारण करतो. सोबतीला चार-आठ तरुण वाद्याची साथ धरायला ढोलकी, हातात भंडाऱ्याचे ताट घेवून हा तांडा गावागावातून नाच करीत फाग मागत फिरतो. स्त्री वेशधारी तरुण चित्रविचित्र हालचाली, हावभाव करून नाचतो. त्यामुळे गावकऱ्यांचे चांगले मनोरंजन होते. ढोलकी, घुंगरू, गीत यांच्या सुरेख मिलनावर स्त्रीवेशधारी तरुण नाच करीत असतो. यालाच कोकणा जमातीत 'पेरण' असे म्हणतात. या नाचाप्रसंगी म्हटले जाणारे नमुनेदार लोकगीत पुढीलप्रमाणे,

'भेंडीचे झाडाखलं कोणं वं उभा
कपाळाची टिकली कोणी वं नेली। कपाळाची टिकली चोरांनी नेली।
आंगातली चोळी कोणी वं नेली। आंगातली चोळी पोरांनी नेली।।'

स्त्री वापरत असलेल्या एकेका वस्तूचे वर्णन असे क्रमाक्रमाने करून या गीताचा पाहिजे तेवढा विस्तार लांबविता येतो. अश्लीलतेवर आधारीत असलेले हे गीत आहे. गीत गायनाच्या विशिष्ट पद्धतीमुळे विनोदाची निर्मिती होते.

कोकणा जमातीत 'पेरण' या नाचाप्रसंगी म्हटले जाणारे पुन्हा हे खालील एक नमुनेदार लोकगीत,

'ठकीबाई सवासनी कसेची, मांडवात बाई सांबळ दनाणं।धृ।
माजे आंगाल चोळी नाय गं।। ठकीबाई सवासनी कसेची।
मांडवात टारपी दनाणं, माजे आंगाल साज नाय गं।।'

कोकणा जमातीत रूढ असलेल्या या नाचातून त्यांचे समाजदर्शन, त्यांची आर्थिक स्थिती, त्यांच्या रूढी, प्रथा, त्यांचा पेहराव, विनोदी, खेळकर स्वभाव तसेच त्यांच्या नृत्यगाण कलेचा आविष्कार घडतो. 'कोकणी' बोलीभाषेचे दर्शनही यातून घडते. स्त्रीच्या वाट्याला आलेले दारिद्र्य या गीतातून आपल्यापुढे येते.

होळी सणानंतर २ ते ४ हौसी पोरं मेणापासून शंकूकार आकार तयार करून त्यावर मोरपीस रोवतात व हातात भंडाऱ्याचे ताट घेवून गावागावांतून गाणी म्हणत फाग मागत फिरतात. यालाच ते 'खटखूबा' असे म्हणतात. या प्रसंगी म्हटले जाणारे एक नमुनेदार कोकणा लोकगीत पुढीलप्रमाणे,

'खटखूबा दाराशी उभा,
तारादेव का मारादेव, नाचरे सुकीरदेव घराचा वासा, घरधनी तासा,
घराचा धारण-घरधनी चारण,
आठली बांडगी कोठं गेली, चाटू मोडून रागा गेली।
वाड्यातली भाजी घरधनीन ताजी, चिवकला चिमटा, बांडगीचा हिंमटा, डाम्या आंबा, गळ चिपक, डोशी डोळं मोड, सागाचा सोटा, घरधनी मोठा। वावराची भाजी, देव झाला राजी।।'

'वासुदेव' दान मिळावं म्हणून पौराणिक गीत गाऊन घरातील कर्त्या माणसांची स्तुती करतो. तशाच धर्तीचे काहीसे हे 'खटखूबा' गीत असून या गीताच्या शेवटी सुपात तांदूळ घेवून येणाऱ्या घरधण्याला पाहताच

हा गायक त्याची स्तुती करून 'देव झाला राजी' असे म्हणून त्याला देवपन देतो. 'फाग' पदरात पडताच पुन्हा पुढच्या घरचा रस्ता धरतो. 'भोकला' नावाचा नाचही यावेळी ४ ते ८ गंमती पोरं सादर करून गावोगावी फाग मागत फिरतात. या 'भोकला' नाचाच्या वेळी म्हटले जाणारे एक नमुनेदार लोकगीत पुढीलप्रमाणे,

'भो भो मोकला, दे दे झोकला।
वाड्यातली भाजी घरधनीन ताजी।।
वाजता वाजा, घरधनी ताजा,
आट आट आटल्या, देवू नको उसणे।।
चुली मागं खुटली, हात घालं मुसके।।
डबीत कुकू, घरधनीन चिकू
आठली डोसी कोठं गेली चाटू मोडून रागा गेली।।'

कोकणा जमातीत प्रचलित असलेल्या या विविध प्रकारच्या लोकगीतांमधून व लोकनृत्यांमधून त्यांच्या लोकसंस्कृतीचे एकेक पदर उलगडत जावून त्यांच्या समग्र लोकसंस्कृतीचे दर्शन यातून घडते. या वेगवेगळ्या उलगडणाऱ्या पदरांतून त्यांच्या लोककला, लोकजीवन व समाजजीवनाचा आविष्कार घडतो. एकूण लोकसंस्कृतीचे दर्शन यातून घडते.

संदर्भ ग्रंथसूची :

१) जोशी तर्कतीर्थ लक्ष्मणशास्त्री–मराठी विश्वकोश, खंड १, २, ८ म. रा. सा. संस्कृती मंडळ पुणे
२) प्रा. बी. ए. देशमुख–कोकणा–कोकणी
३) इतिहास आणि जीवन, सुगावा प्रकाशन पुणे, २००६
४) डॉ. गोविंद गारे–बदलाच्या उंबरठ्यावरील कोकणा आदिवासी समाज, श्रीविद्या प्रकाशन पुणे, १९५२
५) डॉ. गोविंद गारे–स्वातंत्र्य लढ्यातील आदिवासी क्रांतिकारक, श्रीविद्या प्रकाशन पुणे, १९५२
६) डॉ. देवगावकर शैलजा–वैदर्भीय आदिवासी जीवन व संस्कृती, श्री मंगेश प्रकाशन नागपूर, १९८९
७) डॉ. देशमुख मोतीराम, कोकणा आदिवासींचे लोकसाहित्य. मेधा पब्लिशिंग हाऊस अमरावती, २०२०
८) डॉ. भवाळकर तारा–लोकसंचित, राजहंस प्रकाशन पुणे, १९८९

हरसुल, नाशिक, ९३२२६१८२५६

***

आदिवासी साहित्य पुरस्कारासाठी आवाहन

महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान आणि मध्यप्रदेशातील आदिवासी साहित्यिकांना प्रोत्साहन मिळावे, जातिवंत साहित्यिकांच्या साहित्याची दखल घेतली जावी, आदिवासी साहित्याच्या प्रेरणा मुळातच इतर साहित्याहून वेगळ्या आहेत याची साहित्य विश्वाला जाणीव व्हावी, या उद्देशाने 'फडकी फाऊंडेशन'च्या वतीने दरवर्षी 'डॉ. गोविंद गारे राज्यस्तरीय आदिवासी साहित्य पुरस्कार' देण्यात येतो. शाल, श्रीफळ, मानचिन्ह व पाच हजार रुपये रोख असे पुरस्काराने स्वरूप असून, डॉ. गोविंद गारे यांचे स्मृती दिनी अकोले, जि. अहमदनगर (महाराष्ट्र) येथे पुरस्काराचे वितरण होईल. आदिवासी साहित्यिकांनी आपली साहित्यकृती दि. ३० मार्च २०२३ पूर्वी पोहोचेल अशी रजिस्टर पोस्टाने पाठवावी. शिवाय साहित्यिकांची साहित्यकृती १ जानेवारी २०२२ ते ३१ डिसेंबर २०२२ या कालावधीत प्रकाशित झालेली असावी.

-: साहित्य पाठविण्याचा पत्ता :-

डॉ. संजय य.लोहकरे, संपादक - फडकी (मासिक)

मु.पो. निरगुडेवाडी (विठे) ४२२६०४, ता. अकोले, जि. अहमदनगर (महाराष्ट्र) मो. ९६५७५४९०७६

आदिवासी साहित्य, संस्कृती आणि अस्मितेचे प्रतीक
ISSN 2319-6033
१५ मे/जून २०२२
वर्ष १५ वे, अंक ६ ते ७
पृष्ठे २०, किंमत रु.२५/-

फंडकी

(मासिक)

राज्यस्तरीय आदिवासी साहित्य पुरस्कार स्वीकारताना मान्यवर साहित्यिक

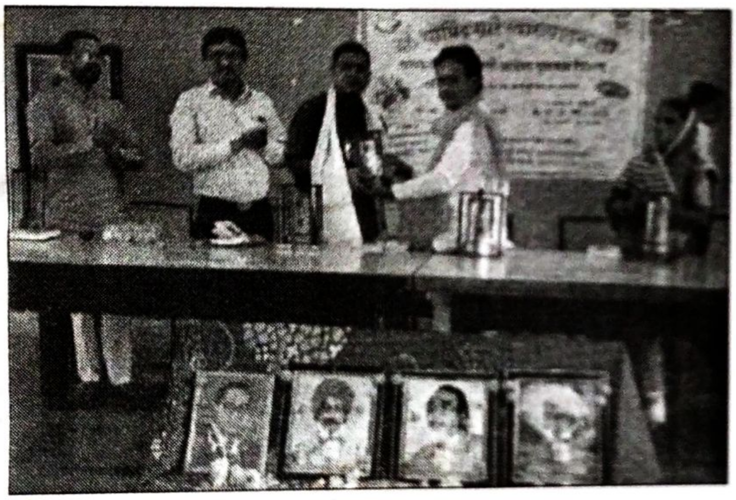

कवी रामदास गिळंदे

डॉ. मोतीराम देशमुख

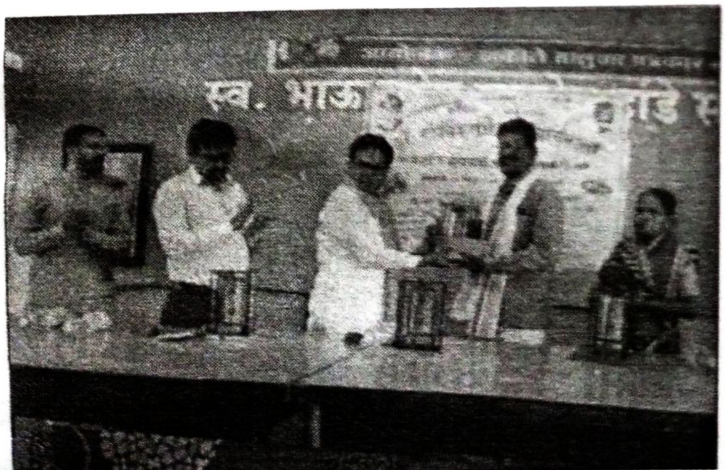

कवी सुरेश धनवे

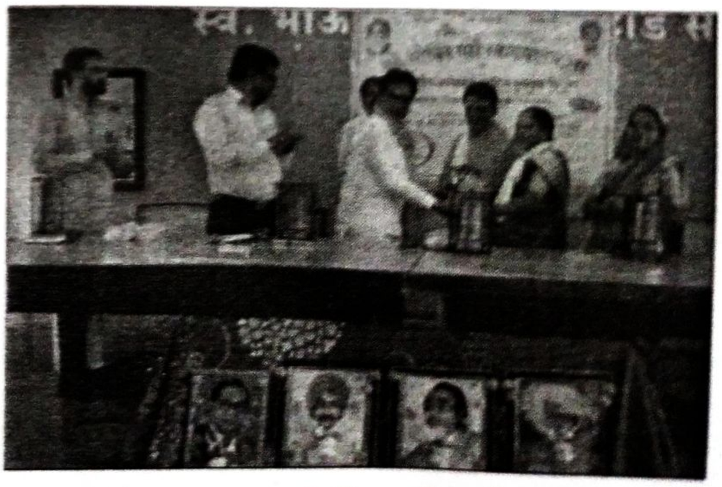

कवी विठ्ठल निरवारे

संपादक–सुनील फलके । कृष्णा साबळे

- मुख्य संपादक : डॉ. संजय लोहकरे
- सहसंपादक : प्रा. डॉ. तुकाराम रोंगटे
  डॉ. मारुती आढळ
- उपसंपादक : डॉ. सोनू लांडे
  डॉ. मधुचंद्र भुसारे
- कार्यकारी संपादक : मा. संजय इदे
  डॉ. सुनील घनकुटे
- प्रसिद्धी
  देवराम आढळ सुनील फलके
  पंकज इरनक प्रा. रामदास गिळंदे
- संपादक मंडळ
  कृष्णा साबळे तुकाराम धांडे
  देवदत्त चौधरी कैलास धिंदळे
  अभिजित करवंदे अभिमन्यू दारसिंबे
  रोशन जांबू सीता भोजने
  रोहिदास डगळे मेजर विठ्ठल बांगर
  डॉ. विष्णू बोरसे

❁ अनुक्रमणिका ❁

* संपादकीय	३
* वाकय	५
* अस्वस्थ मनाचे बंड	६
* बाई आणि लोकशाही	७
* कोकणा आदिवासींचे लोकसाहित्य	८
* कोंब फुटल्या जाणिवांची राजकीय कविता	९

- अक्षर जुळवणी – संजय महल्ले
  मेधा पब्लिशिंग हाऊस
  'अक्षरवेल', नरसम्मा कॉलेजजवळ
  किरणनगर, अमरावती ४४४६०६ (महाराष्ट्र)
  मोबा. ९४२३६२२६६७
  E-mail-medhaphouse@gmail.com
- प्रकाशन स्थळ/पत्र व्यवहार
  संपादक – डॉ. संजय यशवंत लोहकरे
  निरगुडेवाडी (विठे) ४२२६०४
  ता. अकोले जि. अहमदनगर
  मोबा. 09657549076, 9404979683
  E-mail-phadki@rediffmail.com
- मूल्य : रु. २५/-

वर्गणीचे दर

वार्षिक : 300 रु., दशवार्षिक : 2500 रु.
आजीव : 5000 रु.
संपादकीय पत्त्यावर मनी ऑर्डर, चेक
किंवा डिमांड ड्राफ्टने वर्गणी पाठवावी
'फडकी' या नावाने चेक/डिमांड ड्राफ्ट असावा.
बँक ट्रान्सफरने वर्गणी भरण्यासाठी तपशील
बँक ऑफ महाराष्ट्र शाखा, अकोले जि. अहमदनगर
'फडकी' या नावाने बचत खाते
खाते क्र. 60307966854
IFSC Code : MAHB 0001641
MICR No. : 422014502

(मासिकातील लेखांशी संपादक सहमत असेलच असे नाही.)

कोकणा आदिवासींचे लोकसाहित्य

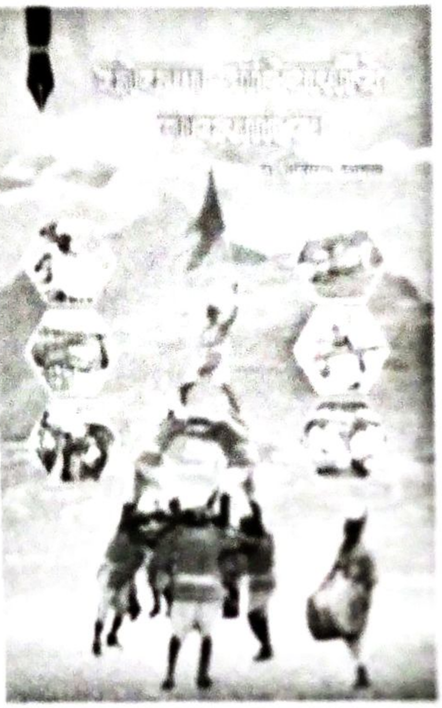

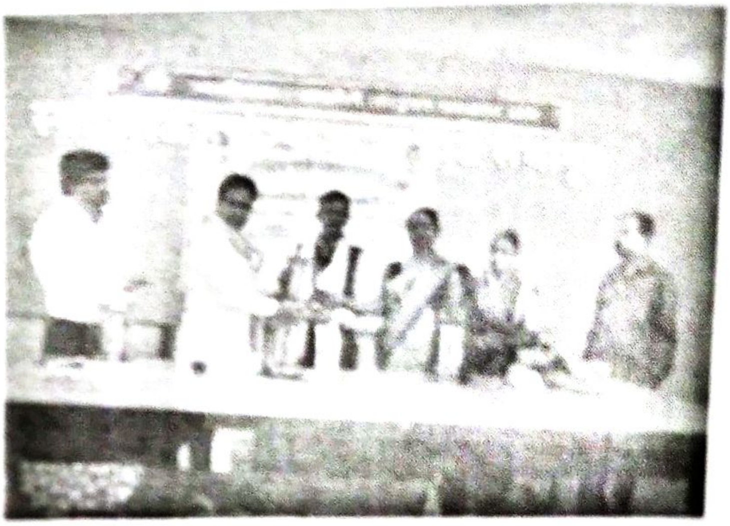

जगातील आदिम संस्कृती एकच असून आदिवासी संस्कृती हा मानवी संस्कृतीचा मूलस्रोत मानला जातो. परंतु, कालौघात जगभरात धर्म,पंथ, संप्रदाय निर्माण करून त्याचा सत्तास्थापनेसाठी, स्वार्थासाठी वापर होऊ लागला आणि तिथेच आदिम संस्कृतीला मागासलेले ठरविले. आणि म्हणून आजच्या जागतिकीकरणाच्या युगात; आर्थिक भांडवलशाहीला मूल्यव्यवस्था मानलेल्या युगात; मानवाच्या प्रगतीचा इतिहास अभ्यासायचा असेल तर आदिम संस्कृतीचा समाजशास्त्रीय, मानववंशशास्त्रीय, भाषाशास्त्रीय अभ्यास होणे गरजेचे आहे. हा अभ्यास म्हणजे मानवी संस्कृतीच्या बीजात्मक वैशिष्ट्यांचा अभ्यास आहे. असा कोकणा आदिवासींच्या लोकसाहित्याचा अभ्यास करून प्राचार्य डॉ. मोतीराम देशमुख यांनी आदिवासी संस्कृतीतील मानवी संस्कृतीच्या काही मूलस्रोतांचा अभ्यास या ग्रंथात केला आहे.

आदिवासी लोकसाहित्य हा समग्र मानवी संस्कृतीच्या अभ्यासाचा मूलस्रोत असेल, तर आदिवासींच्या कला, भाषा, व्यवहार, शेती पद्धती, विवाहपद्धती, देवदेवता, परंपरा, श्रद्धा, स्त्री-पुरुष संबंध, निसर्ग-जाणिवांसह त्यांच्या दैनंदिन, परंपरागत जीवनप्रवाहांचा, एकजिनसीपणाचा, स्थल, काल सापेक्षतेने, विविधतेने आपले अस्तित्व प्रगट करीत, परिवर्तनशीलतेने, समूहाने जगण्याचा सखोल अभ्यास होणे गरजेचे आहे. तसा प्रयत्न डॉ. मोतीराम देशमुख यांनी केला आहे. त्यातून आदिवासींची धर्मपूर्व संस्कृती आणि धर्मांतर्गत धर्मधारणाही आल्या आहेत. त्या विविध पूजाविधी आणि यातुक्रिया, सणोत्सवांच्या व्यवहारातून अभ्यासल्या आहेत. लोकसाहित्याचे अभ्यासक फ्रान्झ बोआस म्हणतात, 'ज्या बाबी लोकांना त्यांचे जीवनाच्या संदर्भात महत्त्वाच्या वाटतात त्याच ते पुढील पिढीला संक्रमित करतात.' ही संक्रमणावस्था आदिवासी लोकसाहित्यातून अभ्यासली आहे. उदा.वाघदेव, गावदेव, सटवाई, मावल्याई यांची पूजा, तसेच ढोलनृत्य, टारपीनृत्य, मादोळ, घुंगुरुकाठी, टिपऱ्या, फुगडी, शिकारनृत्य, कोंबडानाच,चारणनृत्य,खापऱ्याचोर, घोडानृत्य, मोरनृत्य, कारवनृत्य व थाळवाद्य इ.परंपरा आजही जीवनाचा

 ISSN 2319-6033

आनंद लूटण्यासाठी आणि जीवनधारणा बलिष्ठ करण्यासाठी आदिवासींत संक्रमित होत आहेत.

'कोकणा आदिवासींचे लोकसाहित्य' हा ग्रंथ आदिवासी लोकसाहित्याचा, लोकसंस्कृतीचा अभ्यास करण्यासाठी उपयुक्त आहे. लोकगीते, लोककला आणि कोकणा बोलीचा सैध्दांतिक अभ्यास करून कोकणा आदिवासींच्या जीवनस्रोतांचा शोध घेतला असला, तरी कोकणा आदिवासींचे आर्थिक आणि सामाजिक, शैक्षणिक जीवनाचा; त्यांचा इतिहास आणि बोलीचा अभ्यास झाल्याशिवाय कोकणा आदिवासींची सद्य:स्थिती समाजपटलावर उमटणार नाही. हा अभ्यास करण्याची क्षमता डॉ. मोतीराम देशमुख यांच्यात आहे.

प्राचार्य डॉ. देशमुख यांचा हा पहिलाच ग्रंथ असला तरी साहित्य चळवळीशी त्यांचा दीर्घकाळापासून संबंध आहे. सहभाग आहे. आदिवासींच्या शिक्षणातही त्यांचे मोलाचे योगदान आहे. त्यांचा हा ग्रंथ लोकसाहित्याच्या अभ्यासकांना, संस्कृतीच्या अभ्यासकांना दिशादर्शक ठरणारा आहे. त्यांच्या पुढील संशोधनासाठी आणि साहित्य निर्मितीसाठी आमच्या शुभेच्छा !

-डॉ. संजय लोहकरे

कोंब फुटल्या जाणिवांची राजकीय कविता

'साहित्य वा कला हा अभिव्यक्तीचा आविष्कार आहे आणि अभिव्यक्ती प्रभावी व्हायची असेल तर तीत समाजकारण व राजकारणाचे प्रतिबिंब असले पाहिजे' हे न्यायमूर्ती चंद्रचूड यांचे विधान अनेक अर्थांने महत्त्वपूर्ण वाटते. कोणताही कवी कविता लिहितो म्हणजे नेमके काय करतो ? तर तो, संस्कृती, समाज आणि राजकारणावर भाष्य करतो. अराजकतेविरूद्ध आवाज उठवतो. धार्मिक किंवा राजकीय हुकुमशाहीला आव्हान देतो. हे करताना तो कलावादी दृष्टिकोन समोर ठेवून कलाकृती निर्माण करतो. हे काम जगभरातील कवींनी सातत्याने आणि निष्ठेने केलेले दिसते. ऑडेन हा लेखक म्हणतो, 'Poetry makes nothing'[1] कविता काहीच करू शकत नाही. परंतु मंगलेश डबराल या हिंदीतील सुप्रसिद्ध कवीचं म्हणणं आहे की, 'बहुत से लोग ऐसा मानते है कि कविता कुछ नहीं करती; जबकि कविता कभी-कभी कुछ करती है । कविता क्रांति नहीं कर सकती, लेकिन आज तक कोई भी क्रांति कविता के बगैर हुई नहीं । रूस की क्रांति, क्युबा की क्रांति या जहाँ भी बड़े परिवर्तन हुए है - चाहे स्पेन के तानाशाह फ्रांको के खिलाफ कवियों का बड़ा हस्तक्षेप रहा है । बहुत से कवियों ने फ्रांको के विरूद्ध लिखा । यहाँ तक कि लोर्का जैसा संवेदना के उच्चस्तर धरातल पर रहनेवाला कवि भी फ्रांको के खिलाफ कविता लिखता है । कई बार कवि को बतौर फाइटर लड़ना भी होता है । आफ्रिकी देशों में ऐसा बहुत हुआ है । वहाँ बहुत से योद्धा कवि हैं -जिन्होंने अद्भुत कविताएं लिखीं और अद्भुत लड़ाइयां भी लड़ी । कविता निष्क्रिय होती है या वह ज्यादा से ज्यादा व्यक्ति को बदल सकती है; जनसमुदाय को नहीं, ऐसी बाते अधूरा सच है । इसके अपवाद हमेशा मौजूद रहे हैं । ऐसा मानने वाले कम नहीं है कि कविता संघर्ष है, त्याग है और एकजूट है । जब-जब इतिहास ने अवसर दिया, कवियों ने अलग-अलग भूमिकाएं निभाई है'[2]

भारतीय साहित्याचा अभ्यास करताना गेल्या शतकात संघर्षाची भूमिका घेऊन अनेक कवींनी माणसाच्या न्याय, स्वातंत्र्य आणि समतेसाठी, धर्मनिरपेक्ष समाज निर्मितीसाठी, टोकाच्या राष्ट्रवादी भूमिकेविरूद्ध आणि राजकीय हुकुमशाहीला वठणीवर आणण्यासाठी कविता हे हत्यार वापरले आहे. त्यात कवी पाश, धुमिल,

आदिवासी साहित्य, संस्कृती आणि अस्मितेचे प्रतीक

ISSN 2319-6033

१५ जून २०१९

वर्ष - १२ वे अंक ७

किंमत रू. २०/-

पृष्ठे - २८

पडकी

(मासिक)

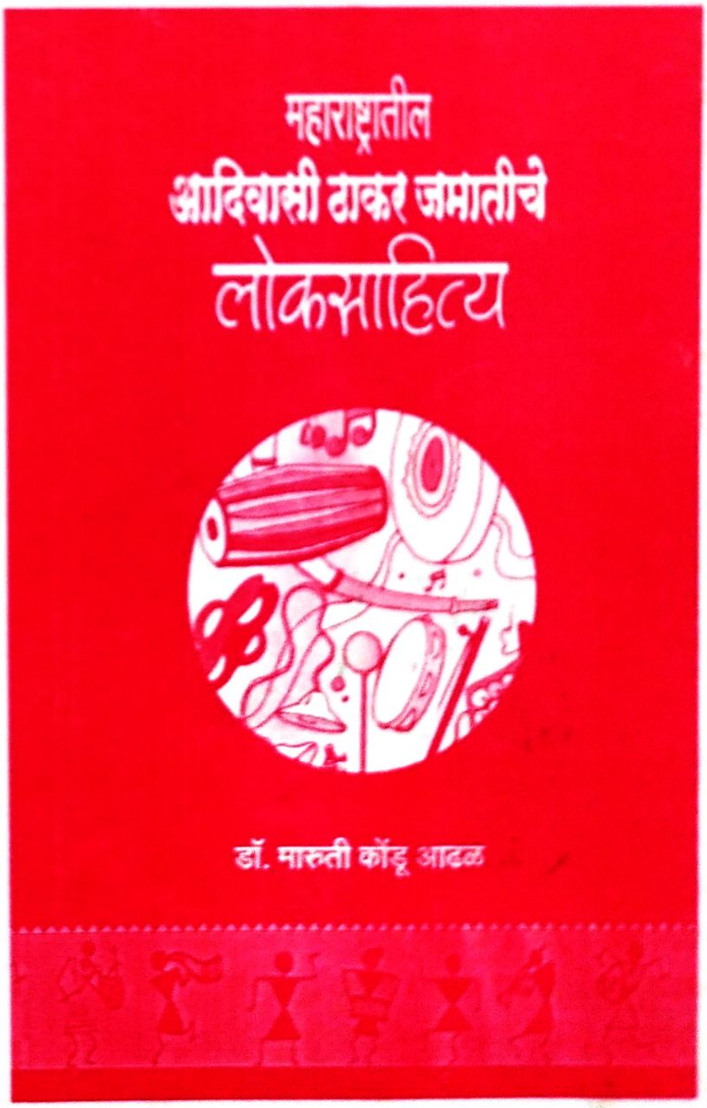

संपादक - डॉ. मारुती आढळ ।। देवराम आढळ

ISSN. 2319-6033 फडकी

मुख्य संपादक
डॉ. संजय लोहकरे

सहसंपादक
प्रा.डॉ.तुकाराम रोंगटे, डॉ. मारूती आढळ

उप संपादक
डॉ. सोनू लांडे, मधुचंद्र भुसारे

कार्यकारी संपादक
मा. संजय इदे, डॉ. सुनील घनकुटे

प्रसिद्धी
देवराम आढळ सुनील फलके
पंकज इरनक प्रा. रामदास गिळंदे

संपादक मंडळ
सुनील गायकवाड तुकाराम धांडे
कृष्णा साबळे कैलास चिंदळे
देवदत्त चौधरी राहूल शेंगाळ
अभिजित करवंदे सीता भोजने
प्रा. कुंडलिक पारधी मेजर विठ्ठल बांगर

अक्षरजुळवणी:
सरिता ग्राफिक्स ॲण्ड प्रिंटर्स
अमरावती

प्रकाशन स्थळ / पत्र व्यवहार
संपादक - डॉ. संजय यशवंत लोहकरे
निरगुडेवाडी (विठे) ४२२ ६०४
ता. अकोले, जि.अहमदनगर
संपर्क: ९६५७५४९०७६, ९४०४९७९६८३
ई-मेल : phadki@rediffmail.com

(मासिकातील लेखांशी संपादक सहमत असेलच असे नाही)

अनुक्रमणिका

- **आदिवासी कला आणि साहित्यातील मिथकसृष्टी**
  संजय लोहकरे ०३
- **ललित- जीव्हा सोमा म्हसे**
  रामदास गिळंदे ०६
- **ओंयार्च कारटं : एक आकलन**
  डॉ. मोतीराम देशमुख १०
- **पोवारी बोली : सिंहावलोकन**
  डॉ. ज्ञानेश्वर टेंभरे २१

वर्गणीचे दर

वार्षिक:- 250 रू., दशवार्षिक:- 2500 रू.,
आजीव:- 5000 रू.
संपादकीय पत्त्यावर मनी ऑर्डर, चेक
किंवा डिमांड ड्राफ्टने वर्गणी पाठवावी.
'फडकी' या नावाने चेक / डिमांड ड्राफ्ट असावा.

बँक ट्रान्स्फरने वर्गणी भरण्यासाठी तपशील
बँक ऑफ महाराष्ट्र शाखा, अकोले, जि. अहमदनगर
बचत खाते क्र. :- 60307966854
IFSC Code :- MAHB0001641
MICR No. :- 422014502

आंधाचं कारटं : एक आकलन

डॉ. मोतीराम देशमुख, प्राचार्य कला, विज्ञान व वाणिज्य महाविद्यालय, हरसूल (नाशिक)

मराठी साहित्यामध्ये १९६० च्या सुमारास नव वाङ्मय प्रवाहांची निर्मिती झाली. विशेषतः या वाङ्मयीन प्रवाहांत बहुजन समाजातील लेखक लेखन करू लागले. यामागे फुले, शाहू, आंबेडकरांच्या क्रांतिकारी विचारांची प्रेरणा आहे. याच दरम्यान साधारणतः सत्तरच्या दशकात आदिवासी साहित्य चळवळ जोर धरू लागली. या काळात ग्रामीण, दलित, स्त्रीवादी, आदिवासी, ख्रिस्ती, मुस्लीम असे नव्याने उदयास आलेल्या साहित्य प्रवाहांनी एकूण वाचक वर्गांना अंतर्मूख होऊन आत्मपरीक्षण करावयास भाग पाडले.

आदिवासी समाजातील संघटना, चळवळी व साहित्य चळवळ यांनी समाज बांधवांच्या मनात स्वाभिमान जागृत करण्याचे महत्त्वाचे कार्य केले. आदिवासी समाजाच्या विकासाची काळजी घेणारे व स्वतःला समाज परिवर्तनाच्या लढाईत खारीचा वाटा उचलू पाहणारे कवी, कथाकार, कादंबरीकार लेखन करताना दिसून येतात. गेल्या कित्येक पिढ्या उनवारा, पावसात अर्थपोटी, अर्धनग्न अवस्थेत प्रपंचाचा गाडा ढोर मेहनत करून चालवत आल्या व आजही चालवित आहेत. त्यांच्या वाट्याला आलेल्या हाल अपेष्टा, दुःख, झालेली पिळवणूक, अन्याय, अत्याचार मुक्या जनावरांप्रमाणे सहन करीत आला. या मुक्या वेदनांना सत्तरीच्या दशकात वरील साहित्य प्रकारांतून मोकळे करण्याचा प्रयत्न होऊ लागला.

यामध्ये भुजंग मेश्राम, विनायक तुमराम, वाहरू सोनवणे, बाबाराव मडावी, उषाकिरण आत्राम, कुसम आलाम, डॉ. संजय लोहकरे, देवदत्त चौधरी, रामराजे आत्राम, माधव सरकुंडे, चामुलाल राठवा, डॉ. तुकाराम रोंगटे, तुकाराम धांडे, मधुचंद्र भुसारे, वामन शेडमाके व इतरांचे मोलाचे योगदान आहे. जीवन जगताना आलेले स्वानुभव या साऱ्यांनी आपापल्या पद्धतीने शब्दशब्द करून समाजाचे वास्तव चित्र वाचकांपुढे मांडण्याचा यशस्वी प्रयत्न केला आहे. समाजाला जागे करून न्याय-हक्कासाठी, संघटीत करण्याचे कामही करीत आहेत. ही एकापरीने अभिमानाची बाब आहे. हे व इतर आदिवासी साहित्यिक कवितेनंतर कथा, कादंबरी या साहित्य प्रकारांचा अधिक प्रभावीपणे या कामी उपयोग करीत आहेत.

१९६० नंतर दलित साहित्यात दया पवार, लक्ष्मण गायकवाड, शरणकुमार लिंबाळे, किशोर काळे, अशोक पवार व इतर साहित्यिकांनी आत्मकथने लिहिली. नव लेखकांना त्यातून दिशा व प्रेरणा मिळाली. पुढील काळात आत्मकथन लिखानास गती मिळाली. ती आजही टिकून आहे.

या व इतर लेखकांकडून प्रेरणा घेऊन आदिवासी लेखकांनीही आत्मकथन लिहायला सुरुवात केली. यात नजुबाई गावित यांचे 'आदोर', बाबाराव मडावी यांचे 'आकांत', गोपाळ गवारी यांची 'कोळवाडा' कादंबरी अशी काही मोजकीच आत्मकथने वाचकांच्या हातात पोहोचली आहेत. त्यात अलिकडेच पुन्हा नव्याने भर पडली आहे ती प्रा. डॉ. राजेश धनजकर यांचे 'आंधाचं कारटं' या आत्मकथनाने. आत्मकथनांची ही संख्या मोजकीच असली तरी ही सर्व आत्मकथने बोलकी असून नवसाहित्यिकांना दिशा दर्शक, प्रेरणादायी ठरतील एवढे मात्र नक्की. 'आंध' ही आजही महाराष्ट्र शासनाच्या अनुसूचीत जमातीतील एक जमात. यवतमाळ, नांदेड, परभणी, हिंगोली, वाशीम, अकोला, बुलढाणा या जिल्ह्यात प्रामुख्याने ते वास्तव्यास आहेत.

आंध्रप्रदेशातील काही जिल्ह्यांमध्ये या जमातीचे वास्तव आढळून येते.

मोठे कार्य व कतृत्ववान माणसे शक्यतो स्वकथन लिहितात, असाच पायंडा आहे. तो मोडून अठराविश्व दारिद्र्यात जीवन करणारे 'आंध' समाजातील विद्यार्थी-तरूणांपुढे आदर्श निर्माण व्हावा. मेहनत व कर्तव्याचे जोरावर परिस्थिती बदलांकरिता प्रयत्न करवेत या हेतूनेच दोनदा दहावी नापास होऊनही केवळ जिद्दीमुळे शिक्षण पूर्ण करतो व चांगली नोकरीही मिळवतो. हा शिक्षणाचा फायदाही त्यांना कळावा, हा हेतू प्रा. डॉ. राजेश धनजकर यांच्या हे स्वकथन लिहिण्यामागचा आहे.

धनज ता. उमरखेड, जि. यवतमाळ या सर्व जाती धर्मीय गावात आई नागुबाई, वडील श्रीराम बोंबले या निरक्षर दाम्पत्याच्या पोटी कुडाच्या घरात राजेशचा जन्म झाला. गावत चौथीपर्यंत शाळा. हयगय करणाऱ्या मुलांना 'माया मेलो, बापो मेलो' म्हणेपर्यंत हाग्या मार दिला जाई. श्री हरडफकर व श्रीवास्तव हे या शाळेचे शिक्षक. शिस्त व शिक्षणाचे बाबतीत अतिशय कडक. घराच्या काहीशी बाजूलाच शाळा होती. अडाणीपणाचे चटके शोषत आलेली आई, मुलाने शाळेत जावे यासाठी सारखे तगादे लावाययची. ''तुम्ही तरी शाळा शिकारे पोराहो, बापाची तर सगळी जिंदगाणी दारू पिण्यात अन् उकंड्यांवर लोळण्यात गेली. तुम्हालाय तसंच लोळायचं असल, तर राहू द्या ती तुमची शाळानगिळा. जा उद्यापासून ढोरं वळायला. करा तुमचं काळं त्या ढोरांमागं.'' कष्टाने जेरीस आलेल्या आईची ही तळमळ खूप काही सांगून जाते. आई नागुबाई व तिच्या पिढीची ही कर्मकहाणी असून भविष्यकाळाची सूचकता प्रातिनिधिक रूपाने यातून आपल्यापुढे येते.

आंध, बंजारा, महार, धनगर, मातंग, न्हावी, मुसलमान या जातीजमातीचे लोक गावात पूर्वीपासून गुण्यागोविंदाने राहतात. बहुतेकांचा शेती-शेतमजुरीच मुख्य व्यवसाय. गावात पोळ्याच्या तिसऱ्या दिवशी दुधागिरी महाराजांचे नावे भरणारी यात्रा गावचा एकोपा लक्षात आणून देते.

शिक्षणाची गोडी व सुसंस्काराचे अभावामुळे अज्ञान, अंधश्रद्धा, रूढी, प्रथा, परंपरा, निरक्षरता, करणी, भानामती, बाहेर बाधा आदि रूढ प्रथा, परंपरेत वावरणारं हे गाव. गावातील कर्ती बुजूर्ग माणसं सोडाच पण ओठावर मिशी येण्याच्या वयाची तरणीताठी पोरं तंबाखू, गुटखा खाण्याची व दारू पिण्याचे संख्येत दिवसेंदिवस होणारी वाढ चिंताजनक असून गावाचे आरोग्य व एकोपा उद्ध्वस्त करणारी वाटते. दरवर्षी दिवाळीनंतर कापूस वेचणे, ऊस तोडणे, कांदे काढणे, मिरच्या तोडणे इ. कामासाठी चंद्रपूर, म्हैसा, नारायणराव आदि ठिकाणी रोजगाराचे शोधार्थ होणारे स्थलांतर गावची सामाजिक, आर्थिक स्थिती ध्यानात येण्यास मदत होते. अज्ञान, डोळस शिक्षणाचे अभावामुळे अंधश्रद्धा अजूनही टिकून आहे. स्थानिक राजकीय खंबीर नेतृत्वाचे अभावामुळे शेतकरी, शेतमजूरांचे अद्यापही सुरू असलेले स्थलांतर हे गावचे दुर्दैवच म्हणावे लागेल.

शैक्षणिक वातावरणाचा अभाव व वडिलांच्या दारू पिण्याच्या सवयीमुळे घरातील वातावरण विस्कळीत होत असले, तरी निसर्गाच्या शाळेत शिकलेल्या नागुबाईची, मुलांच्या भविष्याच्या हिताने शिकण्याची तळमळ अंतर्मूख करणारी वाटते. गावाच्या शाळेतील 'हाग्या मार'च्या भीतीने जवळपास अडीच किलोमीटर अंतरावरील मोहदरी येथील शाळेत मोठाभाऊ रामराव व स्वकथनकार राजेश या दोघांचाही पहिलीच्या वर्गात प्रवेश झाला. ना. म. कदम सरांचे मार्गदर्शनाखाली चौथी व सातवीची बोर्डाची परीक्षा चांगल्या मार्कांनी

पास केली. गजानन कदम, प्रल्हाद फोले या वर्गमित्रांचेही या कामी चांगले सहकार्य लाभले. स्वतः ना. मा. कदमसर गावी जाऊन आई वडिलांना ''तुमची मुले हुशार आहेत, आपण त्यांना कुठेतरी बाहेरगावी ठेवू, पण त्यांना शिकू द्या...'' असे सांगून स्वतःच म. ज्योतिबा फुले विद्यालय, उमरखेड येथे राजेश, रामराव व लक्ष्मण मोरे या तिघांची नावे दाखल केली. शाळा ते बोर्डिंग जवळपास अडीच ते तीन किलेमीटर अंतर नेहमी पायीच चालत. बोर्डीगमधील जुने विद्यार्थी व वयाने मोठे विद्यार्थी अनेकदा बोंबल्या, मासोळ्या म्हणून टिंगल टवाळी करत त्रास देत.

हायब्रीड भाकरी व मसुरीचे नुसते भळभळ पाणी, वरण हे रोजचे जेवण. हे सारं कंटाळवाणं व नकोसं असतानाही केवळ आईसाठी राजेश सहन करत आला.

उन्हाळ्याच्या सुट्टीत मासे, लावरी, तितर, ससे, पानकोंबडा यासारखे पशु-पक्षी पकडणे-खाणे, दुपारी पोहायला जाणे हे सुट्टीतील ठरलेले उपक्रम. कबड्डी बरोबरच विटीदांडू, काचेच्या गोट्या, दगडाच्या गोट्या, आट्यापाट्या, आंब्याच्या झाडावरील डाण व पत्ते हे आवडीचे खेळ.

भोवताली शिक्षित बेरोजगार व अडाणींचीच संख्या अधिक, त्यामुळे बी.ए. झालेले रामराव वाकळे, रामराव आमले यांची भेट झाली. 'शाळा शिकून काहीच फायदा नाही. नोकऱ्या बिकऱ्या कोठे लागायच्या?' त्यांच्या अशा सांगण्याने नाराजी निर्माण व्हायची, तर इतर विद्यार्थ्यांमध्येही शिक्षणाचे बाबतीत उदासीनता होती. दोष त्यांचा नव्हता, कारण त्यांना शिक्षणाचे महत्त्व पटलेले नव्हते. वडिलांना 'बापू मी उद्यापासून शाळेत जात नाही' म्हणून सांगणारे राजेशच्या मनावर परिणाम झाला तो या वातावरणाचा. पण पहिल्या वर्गापासून आईची जिद्द व कदम सरांच्या प्रेमामुळे बळ मिळत गेले. पुरेपूर अभ्यास करून, मेहनत घेऊनही गावातील सखाराम आमले, बळीराम झाटे, रामराव बोंबले, परमेश्वर झाटे यांचेसह राजेशही मराठी, गणित या विषयात दहावीचे परीक्षेत नापास झाला. रामराव शेतीच्या कामाला लागला, तर गावातील उनाड पोरांमुळे राजेश 'हंड्यातलं पुरण', 'काळी चिमणी' चा अनुभव घेण्यात काहीसा रेंगाळू लागला. पुढे शिकावं अशी मुळीच इच्छा राहिली नाही. दिवसभर गावभर उंडारणे, आईला कामात मदत करणे, इसापूर धरणाचे कालव्यावर कामाला जाणे, डिंक काढणे, केळीची झाडे तोडणे आदि कामातून पैसे कमवू लागला. पण उनाड पोरगा म्हणून सर्वत्र होणारी बदनामी टाळण्याचे हेतूने प्रकाश बोंबले व राजेशने कामधंदा शोधण्याच्या नादात पुसद, अकोला गाठले. पुढे बेपत्ता होणे, परत गावात येणे, या व इतरत्र प्रकारांनी आईवडिलांची चिंता वाढली.

''तु तेरी जिंदगी सुधार, हमारा क्या है? पत्ते खेलनेसे कोई फायद नही...'' हे पत्त्याच्या डावातील जहांगीर देशमुख, शेख लुकमान यांनी पाजलेल्या शिक्षणाच्या डोसांनी भानावर येऊन दिलेल्या मॅट्रीकच्या परीक्षेत राजेश पास झाला.

''तुम्ही तरी शिकारे पोरंहो'' या आईच्या तळमळीने उमरखेड विद्यालयात प्रवेश घेऊन बारावी उत्तीर्ण केली. पुढील शिक्षणाची सोय असल्याने राजेशने याच महाविद्यालयात पदवी शिक्षणकरिता प्रवेश घेतला. याच वर्षी मिल्ट्रीच्या एम.ई.आर. क्लर्क प्रशिक्षणासाठी निवड झाली. परंतु तेथील अवघड ट्रेनिंगला कंटाळून पळ काढून पुन्हा अभ्यासात झोकून दिले. शिक्षणाची नाडी गवसल्याने, आत्मविश्वास वाढत गेला. बी.ए. नंतर अमरावती इथे एम.ए., पुढे बीएड. होऊन परभणीच्या गांधी विद्यालयात माध्यमिक शिक्षक म्हणून नेमणूक. सेट परीक्षा उत्तीर्ण होऊन गंगाखेडच्या महाविद्यालयात प्राध्यापक म्हणून रूजू होणे, वाचन आवडीमुळे डॉ. चवरे सरांचे मार्गदर्शनाखाली पीएच.डी.

चे संशोधन कार्यही राजेशने यशस्वीपणे पूर्ण केले.

हे सर्व मिळवणे वरवर सोपे वाटत असले तरी डॉ. राजेशच्या बाबतीत मात्र सभोवतालचे वातावरणामुळे अवघड होते. ''कामाचा शीण व थकवा दारू शिवाय जात नाही'' या अविचाराने वडील व भाऊ साहेबराव यांचे पूर्णत: दारूचे आहारी जाणे. पदवीचे अखेरचे वर्षी मोठाभाऊ रामराव याची बायको रूख्मिनी हिचा लग्नाचे दुसऱ्याच दिवशी आजाराने मृत्यू होणे. राजेशची कन्या नम्रता हिला वारंवार ताप येणे. स्वत:ला झालेल्या सर्दीचा त्रास ९४ इंजेक्शन घेऊनही बरा न होणे. मुलगा दर्शन याच्या जन्माने ८-९ महिन्यापासून डाव्या डोळ्यातून सारखं गळणारं पाणी. पुढे वयाच्या ४/५ वर्षात उद्भवलेला हार्णियाचा आजार. मेंदूत गेलेला ताप. वडीलभाऊ साहेबराव याचा औषध पिण्यामुळे झालेला मृत्यू. राजेशच्या जीवनात या व इतर घटनांचे रूपाने आलेला चढउतार वाचकांना हेलावून सोडतो. यामुळे राजेशची होणारी धावपळ, मनाची होणारी होरपळ यातून कुटुंबाप्रतिचा जिव्हाळा दिसून येतो.

घरात एकापाठोपाठ एक घडलेल्या या घटनांनी सर्व घरदार हादरून गेलेले असतानाही आई-वडिलांच्या कष्टाची जाण, त्यांची अंगमेहनत उघड्या डोळ्यांनी पहिल्याने आणि ''तुम्ही तरी शिकारे पोरंहो'' या आईच्या तळमळीची पावलोपावली येणारी आठवण, आता शिकलेच पाहिजे या जिद्दीने एम.ए., सेट परीक्षा तयारी, संशोधन हे कार्य राजेशने अविरतपणे सुरूच ठेवले. याच दरम्यान बोंबले आडनाव बदलून, धनजकर असे नवीन नाव धारण करून आख्या गावालाच नावारूपाला आणलं. ढोरकष्टात चाललेला आईवडिलांचा प्रपंच. दिवसा शेती, शेतमजुरी तर रात्री जागली ची सेवा. वडिलांना जडलेलं दारूचं व्यसन, अठराविश्व दारिद्र्य, घरात आलेले पिढीजात अज्ञान अशा अनेक चढ-उतारांनी भरलेलं राजेशचं बालपण दिसून येतं. लहानपणी अत्यंत खोडकर, उनाड असलेल्या राजेशच्या जीवनाला आईची जिद्द, वडिलांची साथ, कदम सरांचे प्रोत्साहन यांचे सुंदर रेखाटन या स्वकथनात पहावयास मिळते. यातून रेखाटलेले अनुभव वास्तवाला धरून लिहिल्याने समाजाचे वास्तव दर्शन घडून येथील व्यवस्थेचे चिंतन करायला भाग पाडते. एकूणच आदिवासी कशा परिस्थितीत, किती संकटातून जीवन जगत असतील याचे प्रातिनिधिक रूप या स्वकथनाने आपल्या समोर मांडले आहे. मॅट्रीक नापास झाल्यानंतर, तसेच बी.ए. करताना एटीकेटी घेऊनही केवळ शिकण्याचे जिद्दीने एकेक वर्ग चढत जाणाऱ्या राजेशने तीन वर्षात एम.ए. करून, सेट होऊन पुढे पीएच.डी. संशोधन पूर्ण करणे, हा घटनाक्रम वाचकांना चिंतन करायला लावणारा असून, समाजातील तरूणांपुढे आपल्या रूपाने राजेशने आदर्श उभा केला आहे.

शिक्षणाने राजेशला स्वत:च्या पायावर उभे केले. प्रा.डॉ. राजेश धनजकर अशी नवी ओळख दिली. समाजाचे आपण काही देणे लागतो, या समाजाप्रती असलेल्या कर्तव्य भावनेने ते आदिवासींचे चळवळीत सहभागी झाले. वर्तमानपत्र, मासिकातून लेख प्रकाशित करू लागले. भाषण, व्याख्यानांतून समस्या प्रभावीपणे मांडून समाजाला शहाणे करण्याचे काम सुरू केले. समाज एकोपा व समाज विकासाची तळमळ यातून दिसून येते. दारिद्र्य, अज्ञान व अंधारावर मिळविलेला हा विजय आहे. हे आत्मकथन अनुराधा पब्लिकेशन, नांदेड यांनी प्रकाशित केले असून, मुखपृष्ठ अतिशय बोलके आहे. निवेदनाची भाषा मराठी असून गावरान भाषेने त्यात गोडवा भरला आहे. प्रा. डॉ. राजेश धनजकरांचे ''आंधारं कारटं'' हे आत्मकथन वाचनीय असून, आपणही ते अवश्य वाचावे.

...

आदिवासी साहित्य, संस्कृती आणि अस्मितेचे प्रतीक

ISSN 2319-6033

१५ एप्रिल–मे २०१९

वर्ष १२ वे, अंक ५–६

पृष्ठे ३६ किंमत रु. ३०/-

फडकी

(मासिक)

नगर जिल्ह्यातील अकोले तालुक्यातील कोंभाळणे गावच्या राहीबाई पोपरे यांना शुक्रवारी मा. राष्ट्रपती रामनाथ कोविंद यांच्या हस्ते नारीशक्ती पुरस्कार प्रदान करण्यात आला. विविध पिकांच्या गावरान वाणांची बियाणे बँक चालविणाऱ्या पोपरे यांना कृषी क्षेत्रातील वैविध्यपूर्ण प्रयोगासाठी गौरविण्यात आले आहे. राष्ट्रपती भवनमध्ये या कार्यक्रमाचे आयोजन करण्यात आले होते.

संपादक- डॉ. मारुती आढळ । देवराम आढळ

- मुख्य संपादक : डॉ. संजय लोहकरे
- सहसंपादक : प्रा. डॉ. तुकाराम रोंगटे
  डॉ. मारुती आढळ
- उपसंपादक : डॉ. सोनू लांडे
  मधुचंद्र भुसारे
- कार्यकारी संपादक : मा. संजय इदे
  डॉ. सुनील घनकुटे
- प्रसिद्धी
  देवराम आढळ — सुनील फलके
  पंकज इरनक — प्रा. रामदास गिळंदे
- संपादक मंडळ
  सुनील गायकवाड — तुकाराम धांडे
  कृष्णा साबळे — कैलास पिंदळे
  देवदत्त चौधरी — राहूल शेंगाळ
  अभिजित करवंदे — सीता भोजने
  प्रा. कुंडलिक पारधी — मेजर विठ्ठल बांगर

- अक्षर जुळवणी
  संजय रा. महल्ले
  मेधा पब्लिशिंग हाऊस
  'अक्षरवेल', नरसम्मा कॉलेज जवळ
  किरणनगर, अमरावती ४४४६०६ (महाराष्ट्र)
  मोबा. ९४२३६२२६६७
  E-mail-medhaphouse@gmail.com
- प्रकाशन स्थळ/पत्र व्यवहार
  संपादक - डॉ. संजय यशवंत लोहकरे
  निरगुडेवाडी (विठे) ४२२ ६०४
  ता. अकोले जि. अहमदनगर
  मोबा. 09657549076, 9404979683
  E-mail-phadki@rediffmail.com
- मूल्य : रु. ३०/-

(मासिकातील लेखांशी संपादक सहमत असेलच असे नाही.)

* अनुक्रमणिका *

* संपादकीय ३
* (ललित) - बेठ्या रिंबड ११
  रामदास किसन गिळंदे
* आदिवासी जीवनावरील आशयसंपन्न मराठी नाटके १३
  प्रा. विकास बापूराव बहुले
* आदिवासी मूलत: आदिवासीच २२
  डॉ. मोतीराम रावजी देशमुख
* कवी-साहित्यिक सुनील गायकवाड २६
  यासना संमेलनाध्यक्षना इचार (पुरीचावय) - सुनील गायकवाड
* निसर्गवादावर निष्ठा ठेवून जगणारा ३२
  आदिवासी समूह : A/C भारत सरकार
  प्रा. एकनाथ आहेर

वर्गणीचे दर

वार्षिक : 250 रु., दशवार्षिक : 2500 रु.
आजीव : 5000 रु.
संपादकीय पत्त्यावर मनी ऑर्डर, चेक किंवा डिमांड ड्राफ्टने वर्गणी पाठवावी
'फडकी' या नावाने चेक/डिमांड ड्राफ्ट असावा.

बँक ट्रान्सफरने वर्गणी भरण्यासाठी तपशील
बँक ऑफ महाराष्ट्र शाखा, अकोले
जि. अहमदनगर
'फडकी' या नावाने बचत खाते
क्र. 60307966854
IFSC Code : MAHB 0001641
MICR No. : 422014502

आदिवासी मूलत: आदिवासीच

■ डॉ. मोतीराम रावजी देशमुख
मो.नं. ९०११०२७६०८

आदिवासींच्या मौखिक वाड:मयाचा, त्यांच्या समाज जीवनाचा तसेच त्यांच्या धर्मजीवनाचाही अभ्यास अलीकडे सुरु झाला आहे. त्यांचे आचार-विचार, समजुती, रुढी, विधीतून त्यांची संस्कृती आणि धर्माविषयीच्या कल्पना प्रकट होतात. आदिवासी जमातीचा धर्म वेगळा आहे. बिगर आदिवासींच्या धर्मजीवनाशी त्याचा काहीही संबंध नाही. त्यालाच आदिवासी धर्म अशी संज्ञा पाश्चिमात्यांनी दिली आहे. मानववंश शास्त्रज्ञांच्या भूमिकेत इंग्रज शासन-प्रशासकांनी हा विषय अशा पध्दतीने मांडला की त्या नंतरच्या अभ्यासकांनी तोच निष्कर्ष खरा मानून त्याचाच पुरस्कार केला. त्यांच्याच मताशी सहमती दर्शवून आपली मते मांडली आहेत.

आदिवासी हे हिंदू असल्याचा प्रचार :-

जर्मनीतील डॉ.एडमंड वेबर हे आंतरराष्ट्रीय पातळीवरील धर्मशास्त्र अभ्यासक आहेत. धर्म अभ्यासासाठी त्यांनी इंडोनेशिया, थायलंड, बांग्लादेश, पाकिस्तान यासह भारतातही ते सोळा वेळा येऊन गेले. त्यांच्या अभ्यासाचा विषयच मुळी धर्मशास्त्र हा होता. आदिवासी धर्मासंबधी मत मांडताना ते म्हणतात, 'आशिया खंडाच्या सर्व पौर्वात्य देशाच्या जनजीवन संस्कृतीवर भारतीय विचारसरणीचा म्हणजेच पर्यायाने हिंदू जीवनशैलीचा प्रभाव आहे आणि हा प्रभाव असणे साहजिकच आहे. कारण हिंदू जीवनपध्दती ही जगातील सर्वात प्राचीन विकसित आणि प्रगल्भ संस्कृती आहे. आदिवासी हे हिंदुस्थानातील भूमिपुत्र आहेत. हिंदू हे नामाभिधान हिंदुस्थानात राहणाऱ्या लोकांनाच गेल्या हजारो वर्षापासून दिले गेले आहे, हे ऐतिहासिक सत्य आहे. त्यामुळे आदिवासी हिंदू नाहीत असे म्हणणे उचित नाही!'

याबाबत लोकसाहित्याचे अभ्यासक डॉ. प्रभाकर मांडे म्हणतात, लौकिक आणि अनाकलनीय शक्तीबद्दलची भीतीयुक्त गाढश्रध्दा हा एकूण भारतीय मानसिकतेचा एक विशेष आहे आणि तो आदिवासीतही दिसतो. त्यातूनच भारतातील सर्व जाती जमातींच्या देवदेवतांचे पूजाविधी निर्माण झाले आहेत. त्यांना देवदेवतांचे स्वरुप देऊन प्रसन्न करण्यासाठी कर्मकांड प्रचलित झाले आहेत. महाराष्ट्रातील विविध आदिवासी जमातींचे धर्मजीवन पाहिले तर त्यात हे सगळे विशेष दिसतात. हिंदू हा एक जातीसमाज आहे. त्यात अनेक जाती जमातींचा अंतर्भाव होतो. आदिवासी जमातीचे लोकही या समाजाचे घटक आहेत. सर्वांच्या सांस्कृतिक, धार्मिक आणि सामाजिक धारणा सारख्याच किंबहुना एकच आहेत. त्यांचे भावविश्व, श्रध्दाविश्व आणि विचारविश्व एकच आहे. याचाच अर्थ असा की, ते सगळे मूलत: हिंदूच आहेत. हिंदूत्व हेच त्यांच्या सांस्कृतिक आणि सामाजिक जीवनाचे मुलतत्व आहे.''[१]

डॉ. प्रभाकर मांडे, डॉ.एडमंड वेबर, इतिहासाचार्य राजवाडे यांनी व इतरांनी आदिवासी हे हिंदू असल्याचे म्हटले आहे. परंतु आदिवासींमध्ये हा फूट पाडण्याचा प्रयत्न दिसतो. यासारख्या विचारांमुळे व अन्य कारणांमुळे समाजात अनेक समज-गैरसमज पसरले असून त्यामुळेच आज आदिवासींमध्ये धर्माबाबत संभ्रमाचे वातावरण दिसते.

आदिवासी हे मुलत : आदिवासीच

आदिवासींच्या धर्माविषयी सुप्रसिध्द समाजसेवक वसंतराव नारगोलकर व सौ. नारगोलकर या पतिपत्नींनी आपले मत पुढीलप्रमाणे मांडले आहे. ''आदिवासींच्या धर्माचे स्वरुप हे हिंदू, इस्लाम अगर ख्रिस्ती इ. सुप्रतिष्ठीत धर्मापेक्षा वेगळे आहे हे सांगायला नको. आज हिंदुस्थानात ज्या एकशे बहात्तर आदिवासी जमाती आहेत. त्यांचे प्रत्येकाचे एका मर्यादित अर्थाने वेगवेगळे धर्म आहेत. त्यांना टोळ्यांचे धर्म अगर जमात धर्म (Tribal Religions)

 ISSN 2319-6033

म्हणून संबोधले जाते."[२]

आदिवासींचे आचार-विचार हिंदू धर्मासारखेच आहेत. त्यांनी हिंदू धर्म स्वीकारला अशा स्वरुपाची विधाने खूपच जाणीवपूर्वक मांडली आहेत. आदिवासी हिंदू नाहीत. भारतात प्रचलित असलेल्या कोणत्याही धर्माचे नाहीत असे समजून त्यांना उदार करुणामय असा ख्रिस्तीधर्म देणे म्हणजेच त्यांना ख्रिस्ती धर्मात आणणे हे एक पवित्र कार्य आहे. या विचाराने ख्रिस्ती मिशन यांनी पध्दतशीरपणे प्रचार केला. त्यांचे धर्मांतर करुन त्यांना ख्रिस्ती बनविले. एकंदरीत आदिमांच्या धर्म जीवनासंबंधी मते मांडणाऱ्या बहुतेक अभ्यासकांनी आदिवासींच्या धर्म कल्पना हिंदूपेक्षा कशा वेगळ्या आहेत हेच सिद्ध करण्याचा प्रयत्न केला आहे.

भारत हा विशाल खंडप्राय देश असून येथील भौगोलिक पर्यावरण, वातावरण, हवामान, पर्जन्यमान, प्रदेश विशिष्ठता, जीवन जगण्याची तऱ्हा, रीतिभाती, लहानमोठे गट, सुशिक्षित, अडाणी, १२ कोसांवर बदलणारी भाषा, विशेष म्हणजे प्रत्येक गटागटाने स्वत:चे इतरांपेक्षा जपलेले वेगळेपण, यामुळे निरनिराळ्या आदिवासी जमातींचे धर्मविधीही वेगवेगळे आहेत. धर्म जीवनातील ह्या वरवर दिसणाऱ्या वेगळेपणामुळेच त्यांचे धर्मजीवन हिंदूपेक्षा वेगळे आहे. शिवाय ते अडाणी आणि भोळेभाबडे आहेत. याचाच लाभ घेऊन त्यांचे धर्मांतर करण्याचा प्रयत्न पाश्चिमात्यांनी केला आहे. यात त्यांचे वैचारिक आणि राजकीय हितसंबंध गुंतलेले होते.

प्राचीन काळापासून भारतातील समाजाने निसर्गशक्तींना वेगवेगळ्या देवतांची रुपे देऊन त्यांच्यापुढे नतमस्तक झाल्याचे वेद, उपनिषद आणि इतर धार्मिक ग्रंथांतून दिसते. ऋग्वेदात सूर्य, अग्नी, वरुण, वायू, जल इत्यादी देवतांचे वर्णन आहे. त्यांची स्तवने आहेत. वेद काळापासून पर्जन्यदेवतांची प्रार्थना लोक करीत आले आहेत. हिंदू लोकांप्रमाणेच आदिवासींची नमनगीते, धवळगीते, कहाणी, गाणी यामध्ये विविध देवदेवतांचे वर्णन आहे. ते त्यांचे मंत्रच आहेत. प्राचीन काळापासून ते याचे जतन करीत आले आहेत. हिंदु लोकांप्रमाणेच आदिवासींनीही या निसर्ग देवतांना प्रसंगानुरुप प्रसन्न करुन घेण्याचा आजवर प्रयत्न केला आहे.

हिंदू लोक शंकर-पार्वती, गणपती-गौरी, चंद्र-सूर्य, पृथ्वी यासह गाय, वड, पिंपळ, उंबर, तुळस, बेल यांची प्राचीन काळापासून पूजा करीत आले आहेत. पूर्वीपासून आदिवासींनीही त्यांना देवता रुपे मानली आहेत. मात्र प्रत्येक आदिम जमातीत या देवतांना वेगवेगळी नावे आहेत. प्रसन्न करुन घेण्याची रीत वेगळी आहे, फरक आहे तो एवढाच. सूर्य हा त्यांचा नारायण देव, हिरवा-कुलदेव, गाय-गायत्री, पृथ्वी-धरती, ब्रम्ह-बरमा, शंकर महादेव-मोठादेव (बडादेव), साती आसरा-आसरा, मारुती-मारवती, यम-मुंज्या, गौरी-गवराई, पांढरी, गावदेवी, मावली, कणसरी, वाघदेव, जल, वायू, अग्नी, महालक्ष्मी, सप्तश्रंगी, तुळजाभवानी, मरीमाता इ. हिंदू धर्मीयांप्रमाणेच आदिमांच्याही देवता आहेत. आदिवासींचे श्रध्दाविश्व केवळ सारखेच नाही तर एकच आहे. कुठल्याही कामाच्या प्रारंभी संबंधित देवतेची पूजा करण्याची, नमन करण्याची प्रथा आहे. आदिवासींमधील प्रचलित नमन गीतांच्या मुळाशी सुफली करणाचे तत्व आढळते.

आदिवासी कोकणा आणि इतरही जमातीत विठ्ठल, धर्मा, क्रिष्णा, केशव, राम, अर्जून अशी पुरुषांची, तर पार्वती, लक्ष्मी, सीता, रुक्मिणी, राधा, यशोधा अशी स्त्रियांची नावे आढळतात. यावरुन ते हिंदू असल्याचे म्हटले जाते. वास्तविकता ही नावे हिंदू देवदेवतांची असून ती हजारो वर्षांपासूनची संगत व अनुकरणातून आदरपूर्वक स्वीकारली आहेत.

रामायण, महाभारतावर आधारित कथा-नाट्य स्वरुपात भोवाड्याच्या रुपाने महाराष्ट्रातील निरनिराळ्या भागात प्रतिवर्षी सादर करतात. निरनिराळ्या देवांची सोंगे काढली जातात. याला स्थानपरत्वे, पंचमी, आखाडी, चैती, भवाडा, भोवाडा, लक्ष्मीशक्ती, दशावतार अशी वेगवेगळी नावे आहेत. एवढाच फरक या विधीनाट्यात आहे. विविध हिंदू देवदेवतांचे अवतारकार्य दाखविण्यावरही त्यात भर दिलेला जाणवतो, जी हिंदू धर्माच्या प्रभावामुळे अनुकरणातून

स्वीकारली आहेत. यावरुनही बरेचदा गैरसमज झालेला आढळतो.

शेंडी राखणे, कुंकू, शेंदूर, हळद, भस्म, करदोडा यांना आदिवासींमध्ये महत्त्व आहे. परआत्म्यासंबंधीच्या कल्पना बहुतेक आदिम जमातीत आहेत. मृतात्म्याविषयी असीम श्रध्दा आणि पूज्यभाव आहे. आखाजी सणाला ते पितरांची पूजा करतात. निरनिराळ्या भागात 'वीरगळ' आढळतात. या सर्वांच्या मागे मृतात्म्यासंबंधीचा श्रध्दाभाव दिसतो. नवससायास आणि पशुबळींची प्रथाही अस्तित्वात आहे. भगत या संस्थेला त्यांच्यात फार महत्त्व आहे. पावरा, गोंड, भिल्ल, वारली, कोळी, कोकणा या जमातींच्या उत्पत्तीकथा (पावरा-तोरणमाळची कथा, वारली-अस्तंबाची कहाणी, कोकणा-कणसरीची कहाणी) देवकहाण्या, पावरा, कोकणांची धरतीची कहाणी, धवलगीते, थाळगाणं आणि नमनगीते यांची नावे बदलून तपशीलात थोडासा फेरफार करुन स्वरुपही काहीसे सारखेच असलेले सर्वत्र दिसते. या आदिमांच्या देवकहाण्या, त्यांचे श्रध्दाविश्व आणि भावविश्व तसेच त्यांचे धर्मजीवन यांचे स्वरुप पाहिले तर ते हिंदूपेक्षा वेगळे आहेत असेच दिसते.

आदिवासींचे धार्मिक आणि सांस्कृतिक जीवन पाहिले तर असे स्पष्टपणे दिसते, की निरनिराळ्या प्रांतातील आदिवासी जमातीचे लोक निसर्गपूजक, वृक्ष, प्राणीपूजक आहेत. आदिवासींच्या धर्मजीवनाचे बाह्याविष्कार वरकरणी वेगवेगळे दिसत असले तरी त्यांच्या गाभ्यातील तत्व एकच आहे. रुढी, विधी, सण, उत्सवांच्या मुळाशी असलेले तत्व पाहिले तर त्यांची जीवनसरणी, मानसिकता काहीसी वेगळी दिसत असली तरी त्यांच्यात प्राचीन काळापासून एकात्मता प्रवाही असल्याचे दिसते.

निसर्ग हा आदिवासींचा पोशिंदा आहे. त्याच्यावर त्यांचे प्रेम असून ते त्याला आपली देवता मानतात. आदिवासी संस्कृती, बोलीभाषा, देवदेवता, पूजा पध्दती, परंपरा, रीतिरिवाज, पुरातत्वीय शोध, मानववंशशास्त्र, शरीर रचना, विज्ञान, नस्ल-वंश, डीएनए रिसर्च इतिहास तसेच विविध न्यायालये आणि भारतीय संविधान या सर्वांचे अवलोकनावरुन आदिवासी हे हिंदू, इस्लाम, ख्रिस्ती या व इतर धर्मांहून वेगळे असल्याचे दिसून येते.

न्यायालयीन निर्णय :-

१. माननीय सुप्रीम कोर्ट केस नं. १०३६७/२०१० (५ जाने. २०११) भील

२. माननीय हायकोर्ट जबलपूर (मध्यप्रदेश) रेवन्यु निर्णय क्र. १००/१९९० राम गुलाम बनाम नारायण (बहेलिया)

३. मध्यप्रदेश रेवन्यू निर्णय क्र. १९१/१९८० रामवती नाम सहोदरी बाई (हल्बा)

४. माननीय कुटुंब न्यायालय बालोद (छ.ग.) बनिहारीन बाई व नाम ओहर राम भोयर (हल्बा) प्रकरण क्र. ३/०७ दिनांक ६.१४.२००९

५. माहिती अधिकार (आरटीआई) नुसार आदिवासी हल्बा समाज बालोद महासभाकडून प्राप्त दस्तऐवज सु.आ./०९/६४ दिनांक १५ सप्टेंबर २००९

भारतीय संविधान समिती सदस्य जयपाल सिंह मुंडा यांचे संविधान सभेतील भाषण (संविधान सभा चर्चा कार्यालयीन रिपोर्ट खंड-५, खंड-११)

भारतात चतुर्वर्ण पध्दती अस्तित्वात होती. त्यामधील ब्राम्हण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र यांमध्ये आदिवासी कोणत्याही वर्णात मोडत नाही. शिवाय आदिवासींची कोणतीही प्रथा, परंपरा, विधीमान्यता, देवी-देवता यांचा उल्लेख हिंदू धर्मग्रंथामध्ये आढळून येत नाही. ज्याप्रमाणे पाणी, जल, वॉटर समानार्थी आहेत.

ज्याप्रमाणे ख्रिश्चन धर्म-इसाई धर्म समानार्थी आहेत.

ज्याप्रमाणे मुस्लीम धर्म-इस्लाम धर्म समानार्थी आहेत.

त्याप्रमाणे आदिवासी धर्म-आदिम धर्म-गोंडी धर्म-कोया-पुनेम-सरना धर्म. प्रकृति पूजक-जनजाती धर्म आपापसात समानार्थी आहेत. अर्थात इतरांहून वेगळे आहेत.

१९०१ च्या जनगणना अहवालात ब्रिटिशांनी आदिवासींचा 'प्रकृतीवादी' असा उल्लेख केला आहे.

१९११ च्या जनगणना अहवालात ब्रिटिशांनी जनजाती धर्म,

ISSN 2319-6033

प्रकृती पूजक असा उल्लेख केला आहे.

१९३१ च्या जनगणना अहवालात आदिम धर्म असा उल्लेख केला आहे.

म्हणजे ब्रिटिशांनी देखील आदिवासी संस्कृतीच्या वेगळेपणामुळे ते हिंदू नाहीत असेच मानले आहे.

आदिवासी समाजास जो संविधानाने अधिकार दिला आहे, तो हिंदू म्हणून नाही तर आदिवासी असल्यामुळे दिला आहे. हिंदू असल्याचा एकही फायदा त्यांना आजवर मिळालेला नाही व भविष्यातही मिळणार नाही.

आदिवासी समाज हा प्रकृती पूजक असून जसा प्रकृतीला अहंकार नाही तसा समाजातही अहंकार दिसून येत नाही. सत्य, शीव, सुंदर या प्रकृती सिध्दांतावर आदिवासी संस्कृती आधारलेली आहे. 'आपण देणारे लोक आहोत मागणारे नाहीत' या त्यांच्या जीवन सिध्दांतावरुनही ते हिंदूपासून वेगळे आहेत.

आजवर अनेक अभ्यासकांनी आदिवासी समाजाचे स्वरुप व लक्षणांवरुन व्याख्या करण्याचा प्रयत्न केला आहे. मात्र यांमध्ये एकवाक्यता नसल्याचे दिसून येते. त्यात अपूर्णता जाणवते. त्यापेक्षा 'विशिष्ट भूप्रदेश, समान बोलीभाषा, साधी अर्थव्यवस्था, मर्यादित गरजा, रक्तसंबंधावर आधारित, अक्षरशत्रू पण माणूस, सर्वदूदर विखुरलेल्या स्थितीत राहणारा, निसर्ग शक्तींना शरण जाऊन स्वच्छंदी व समान सांस्कृतिक जीवन जगणारा, देवभोळा, विश्वासू, बुजरा पण राष्ट्रवादी बाण्याचा रहिवाशी म्हणजे आदिवासी ' असे म्हणणे जास्त संयुक्तिक वाटते.

आदिवासी हा इंग्रजीतील Aboriginal या शब्दाचा रुढ मराठी पर्याय आहे. वनात राहणारे म्हणून त्यांना वनवासी म्हणावे, आदिवासी म्हणू नये' असाही एक दृष्टिकोन आहे. आदिवासींना वेगळी अस्मिता किंवा संस्कृती नसून ते इतर नागरिकांप्रमाणेच आहेत. ते वनात वस्ती करुन राहातात, एवढाच त्यांचा वेगळेपणा आहे. अशा प्रकारचा हा दृष्टिकोन आहे. बरेच आदिवासी गट, डोंगरातून राहत असल्यामुळे त्यांना अलीकडे गिरीजन असे म्हटले जाऊ लागले आहे. परंतु हा विचार काहीसा संकुचित वाटतो. शिवाय महाराष्ट्रातील आदिवासी स्वत:ला वनवासी, गिरीजन, भूमीज यापेक्षा अभिमानाने आदिवासी म्हणवून घेण्यातच धन्यता मानतात.

भारतातील वेगवेगळ्या आदिवासी जमातीतील सण-उत्सव, देवदेवता, दैवत कहाणी, जमात उत्पत्ती कहाणी, नमनगीते, स्त्री प्रतिष्ठा, जीवनशैली, रुढी, विधी व उपासना पध्दतीचे स्वरुप जाणून त्यांच्या मुळाशी जाण्याचा प्रयत्न केला, म्हणजेच सांस्कृतिक आणि धर्म जीवनाचा तटस्थपणे अभ्यास केला तर आदिवासी हे मूलत: आदिवासीच आहेत. त्यांनी आपल्या संस्कृतीचे वेगळेपण आजही वरील वेगवेगळ्या रुपाने टिकवून धरले आहे. 'पानी तेरा रंग कैसा......' या उक्तीप्रमाणे, सर्वांमध्ये मिसळण्याच्या त्यांच्या सवईमुळे ते हिंदूना, मिशनऱ्यांना आपले वाटतात. मुळातच अनुकरणप्रिय, चांगल्याचा स्वीकार करणारा आदिवासी हिंदूच्या संगतीत सलोख्याने हजारो वर्ष राहिला. या दरम्यान त्यांनी प्रभावाने अनुकरणातून त्यांच्या अनेक चांगल्या गोष्टी स्वीकारल्या व त्या आपल्याशा करुन घेतल्या. मात्र असे असले तरी आपल्या मूळ संस्कृतीचे वेगळेपण टिकविण्याचा त्यांनी आजवर कसोशीने प्रयत्न केला आहे.

संदर्भ :-

१. डॉ.प्रभाकर मांडे, 'भारतीय आदिवासी विकासाच्या समस्या', गोदावरी प्रकाशन, औरंगाबाद, प्रथम आवृत्ती-२००३

२. वसंत नारगोलकर व सौ. कुसूम नारगोलकर-'जंगलचे राजे' श्री.मौनी विद्यापीठ, प्रथम आवृत्ती-१९५५

***

कोकणा आदिवासींचे लोकसाहित्य

डॉ. मोतीराम देशमुख

कोकणा आदिवासींचे लोकसाहित्य

डॉ. मोतीराम देशमुख

मेधा
पब्लिशिंग हाऊस
अमरावती-६

कोकणा आदिवासींचे
लोकसाहित्य

प्राचार्य डॉ. मोतीराम देशमुख
मु.पो. हरसूल (शेंडेपाडा)
ता. त्र्यंबकेश्वर जि. नाशिक

© लेखकाधीन

प्रकाशक
संजय रा. महाल्ले
मेधा पब्लिशिंग हाऊस
'अक्षरवेल', नरसम्मा कॉलेजजवळ
किरणनगर, अमरावती ४४४६०६ (महाराष्ट्र)
मोबा. ९४२३६२२६६७
E-mail-medhaphouse@gmail.com

प्रथमावृत्ती : ९ ऑगस्ट २०२०

ISBN 978-81-943594-7-0

मूल्य : रु.४००/-

सर्व हक्क सुरक्षित. या पुस्तकातील मजकुरातून/चित्रातून व्यक्त झालेल्या विचाराशी प्रकाशक/मुद्रक सहमत असेलच असे नाही. कुठलाही वाद अमरावती न्याय क्षेत्रांतर्गत राहील.